
चन्दामामा



भीष्म के पिता शान्तनु महाराजा थे। प्रदीप महाराजा के तीन लड़के थे- देवापि शान्तनु व बाह्लिक। प्रदीप ने राज्य छोड़कर वानप्रस्थ ले लिया। उसकी जगह देवापि को राज्यमार सम्भालना था, पर वह भी वनों में चला गया, और पर्यटन करने लगा। और प्रदीप की गद्दी पर शान्तनु बैठा।

एक दिन शन्तनु जब गङ्गा के किनारे टहल रहा था तो उसे गङ्गा स्त्री रूप में दिखाई दी। शान्तनु ने उससे पत्नी होने की प्रार्थना की।

"चाहे.... मैं जो कुछ करूँ, तुम्हे सब सहकर चुप रहना होगा, डाँटना डपटना न होगा। यदि यह मानते हो, तो मैं तुमसे विवाह करने के लिए तैयार हूँ।" यह शान्तनु मान गया।

गङ्गा से शान्तनु के सात लड़के पैदा हुए। गङ्गा ने, ज्योंहि वे पैदा हुए त्योंही उनको ले जाकर गङ्गा में फेंककर उनको मरवा दिया। यह देख शान्तनु को बहुत दुख हुआ, क्योंकि वह उसे बुरा भला न कह सकता था, इसलिए, उसने वह सब कुछ चुपचाप सह लिया।

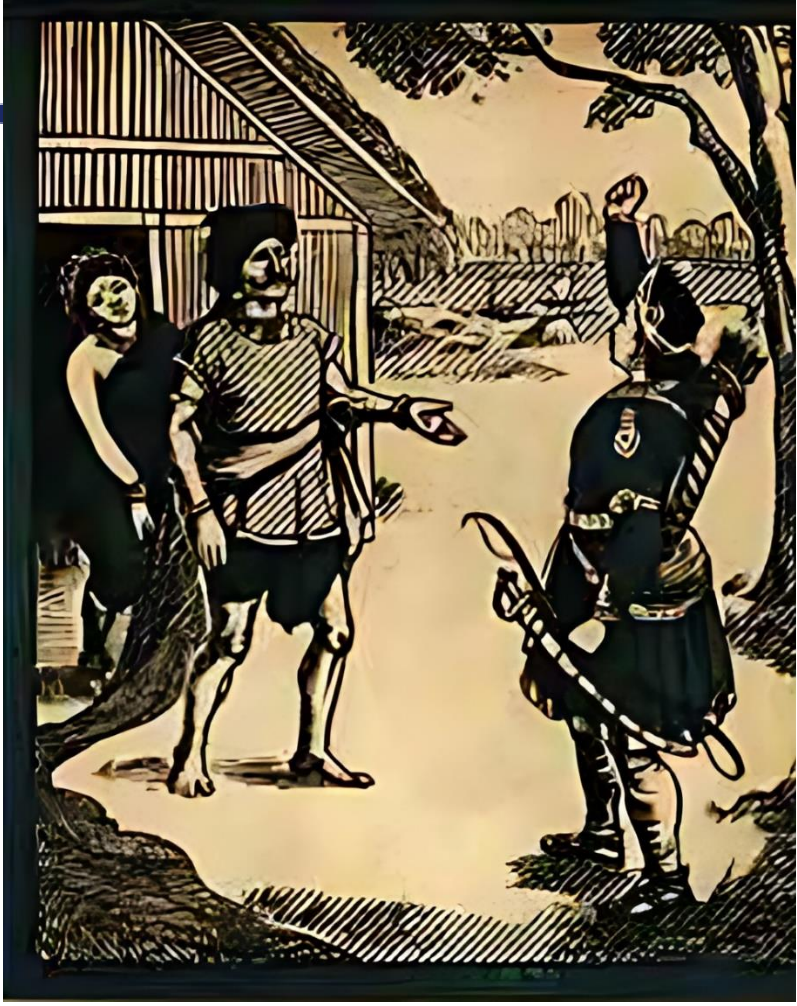
गङ्गा ने आठवें पुत्र को जन्म दिया और उसे भी मारना चाहा। तब शान्तनु से न रहा गया। उसने गङ्गा को डाँटा डपटा। गङ्गा ने उस लड़के को, शान्तनु को देते हुए कहा-"राजा, क्योंकि तुमने अपना समझौता तोड़ा है और मुझे डाँटा है, इसलिए मैं तेरी पत्नी नहीं रही। अब मैं बताती हूँ कि मैंने तेरे पुत्रों को क्यों मारा था। एक समय अष्टवसुवों ने वशिष्ठ की कामधेनु को चुराने का प्रयत्न किया।

उनको इस काम को प्रेरित करनेवाली थी प्रभास नाम के बसु की पत्नी। वशिष्ठ ने उसे शाप दिया कि वे मानव जन्म लें। प्रभास को ही यह शाप दिया कि वह चिरकाल तक मानव रहे। वे आठों मेरे गर्भ से पैदा हुए। सातों को, पैदा होते ही, मैंने उनको जन्म मुक्ति दिलवा दी। यह प्रभास है। यह बहुत दिनों तक जीवित रहकर वसुओं में जा मिलेगा।" यह कह कर वह चली गई। गङ्गा और शान्तनु का आठवाँ लड़का ही भीष्म था।

कुछ समय बीत गया। शान्तनु जब यमुना के किनारे शिकार खेल रहा था तो उसे दाशराज की लड़की सत्यवती दिखाई दी। शान्तनु उसे अपनी पत्नी बनाने के उद्देश्य से दाशराज के पास गया।

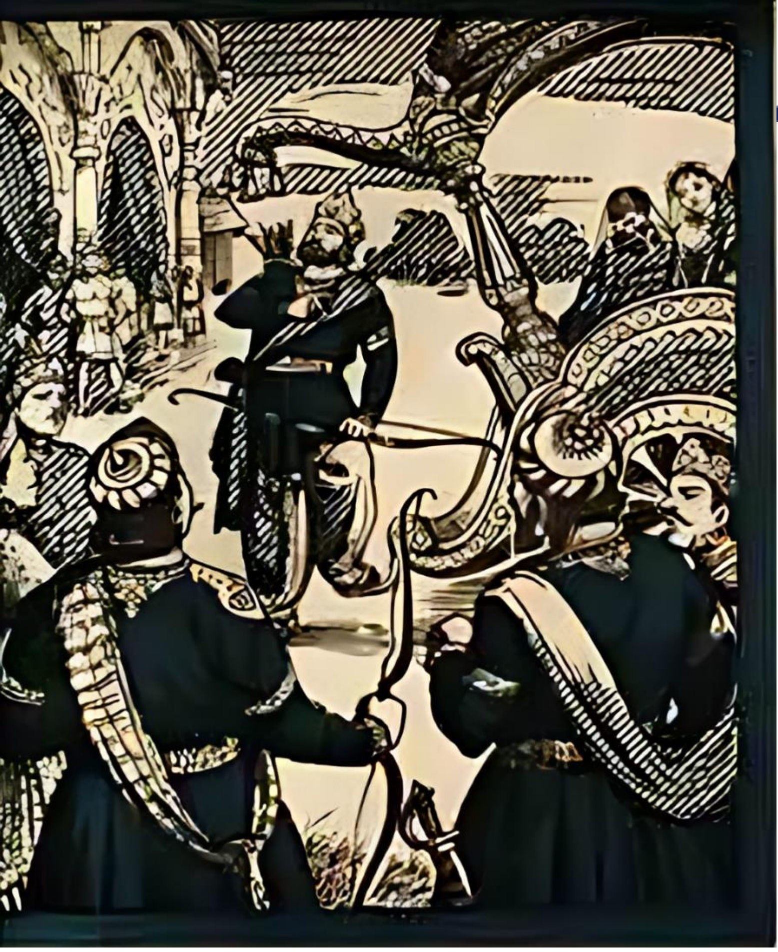
"राजा, तुम्हारे सत्यवती से विवाह करने पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु उसके लड़के का पट्टाभिषेक करना होगा। अगर यह मानते हो, तो तुम्हारा विवाह अभी किये देता हूँ।" दाशराज ने कहा।

शान्तनु यह न माना। जब उसका लड़का भीष्म था, तब वह यह वचन



कैसे देता! वह दुखित हो घर वापस चला आया। भीष्म ने अपने पिता का दुख जानकर, दाशराज के पास जाकर कहा-"आप अपनी लड़की का विवाह मेरे पिता से कीजिये। मुझे राज्य नहीं चाहिये। कहीं आप यह न सोचें कि मेरे पुत्र राज्य के लिए झगड़ा करेंगे; इसलिए मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं आजन्म ब्रह्माचारी रहूँगा।" यही भीष्म प्रतिज्ञा थी।

शान्तनु और सत्यवती का विवाह हुआ। चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य उनके दो पुत्र हुये। शान्तनु बहुत दिनों तक राज्य करके



मर गया। तब भीष्म ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार चित्राङ्गद को राजा बनाया और विचित्रवीर्य को युवराजा।

कुछ दिनों बाद चित्राङ्गद भी मर गया। तब भीष्म ने सत्यवती की अनुमति पर विचित्रवीर्य का राज्याभिषेक किया। और वह उसकी मदद करता राज्य का परिपालन करने लगा।

विचित्रवीर्यं सयाना हुआ। भीष्म ने योग्य कन्या से, उसका विवाह करने का सङ्कल्प किया। उसी समय काशी के राजा ने अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका के स्वयम्बर के लिए भिन्न भिन्न देशों के राजाओं के पास आमन्त्रण भेज रखे थे।

यह जानकर भीष्म, अकेला, रथ में काशी गया। काशी राजा की कन्यायें अपने सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध थीं। जैसे भी हो, भीष्म ने उनका अपने भाई विचित्रवीर्य के साथ विवाह करने का निश्चय किया। भीष्म ने काशी राजा के महल में प्रवेश करके अम्बा, अम्बिका व अम्बालिका को देखा। उन सब राजाओं को भी देखा, जो उनसे विवाह करने के लिए आये हुए थे।

काशी राजा ने घोषणा करवा रखी थी कि यदि उन राजाओं में, जो उसकी पुत्रियों से विवाह करने के लिए वहाँ आये हुए थे, युद्ध हुआ तो उसी के साथ उनका विवाह होगा जो उस युद्ध में विजयी होगा। इसलिए भीष्म ने सब के देखते देखते उन लड़कियों को लाकर अपने रथ में रखा और स्वयम्बर के लिए उपस्थित राजाओं से कहा-"मैं शान्तनु महाराजा का लड़का भीष्म हूँ। मैं काशी राजा की लड़कियों को ले जा रहा हूँ। यदि किसी में शक्ति-साहस है तो इनको छुड़ा ले।"

उन राजाओं को गुस्सा आया। उन्होंने अपने सैनिकों को बुलाया। उनसे रथ, हाथी और घोड़े मँगवा कर उनपर सवार हो, भीष्म से लड़े। भीष्म अपने बाणों से व अस्त्रों से एक समय में, एक साथ सब से लड़ा। उसके सामने राजाओं ने मैदान छोड़ दिया। भीष्म विजयी हुआ।

भीष्म ने काशी राजा की लड़कियों को ले जाकर सत्यवती से कहा-"माँ, ये काशीराजा की लड़कियाँ हैं। अनेक राजाओं को युद्ध में हराकर, में इनको विचित्रवीर्य की पत्नी बनाकर लाया हूँ।" सत्यवती बहुत आनन्दित हुई। उसने भीष्म को आशीर्वाद दिया-"बेटा, तुम हमेशा इसी प्रकार विजयी होते रहो।"

विचित्रवीर्य के विवाह की व्यवस्था हो रही थी। तब काशी राजा की बड़ी लड़की अम्बा ने शर्माते शर्माते भीष्म से कहा-"भीष्म, मैंने पहले ही साल्व देश के राजा से विवाह करने का निश्चय कर लिया है। वे भी मुझ से प्रेम करते हैं। यह बात मेरे पिता नहीं जानते। तुम धर्म, कर्तव्य सब जानते हो.... मैं जब एक से प्रेम



करती हूँ, तब दूसरे से कैसे प्रेम कर सकूँगी! साल्व राजा मेरी प्रतीक्षा करते तड़प रहे होंगे। इसलिए मुझे उनके पास भेज दो।"

यह पता लगते ही मीष्म ने सत्यवती, मन्त्री, पुरोहितों से परामर्श किया और अम्बा को साल्व राजा के पास भेजने का प्रबन्ध किया। वृद्ध ब्राह्मण व दासियों को साथ लेकर अम्बा साल्व राजा के पास गई। उसने साल्व राजा से कहा-"मैं आपके लिए आई हूँ। मैं आपके सिवाय किसी और से विवाह नहीं कर सकती। इसलिए मेरी इच्छा पूरी कीजिये।"



साल्व राजा ने यह सुनकर अट्टहास करके अहा-"अम्बा! तुम तो कभी की भीष्म की पत्नी बन चुकी हो। मैं तुमसे विवाह न करूँगा। भीष्म के पास तुम वापस चली जाओ। मैं किसी और की पत्नी से विवाह करके धर्म का पालन कैसे कर सकता हूँ?"

अम्बा ने साल्व राजा से कहा- "राजा! बिना सच जाने ऐसी बातें न कीजिये। मैं अपनी इच्छा से भीष्म के साथ नहीं गई थी। भीष्म भी मुझसे विवाह करने के लिए मुझे नहीं ले गया था। उसने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा कर रखी है। वह हम तीनों बहनों को विचित्रवीर्य की पत्नी बनाने के लिए लाया था। जब मैंने उससे कहा कि मैं आपसे प्रेम करती हूँ तो उन्होंने इन लोगों के साथ मुझे यहाँ भेजा। मेरी बहनों ने ही विचित्रवीर्य से विवाह किया है। इसमें मैंने ऐसा कौनसा कार्य किया है जो धर्म के प्रतिकूल हो? राजा, मैं शपथ खाकर कहती हूँ, मैं आपके सिवाय किसी और को पति नहीं समझती। मुझे मत ठुकराइये।" उसने उससे कई तरह से प्रार्थना की।

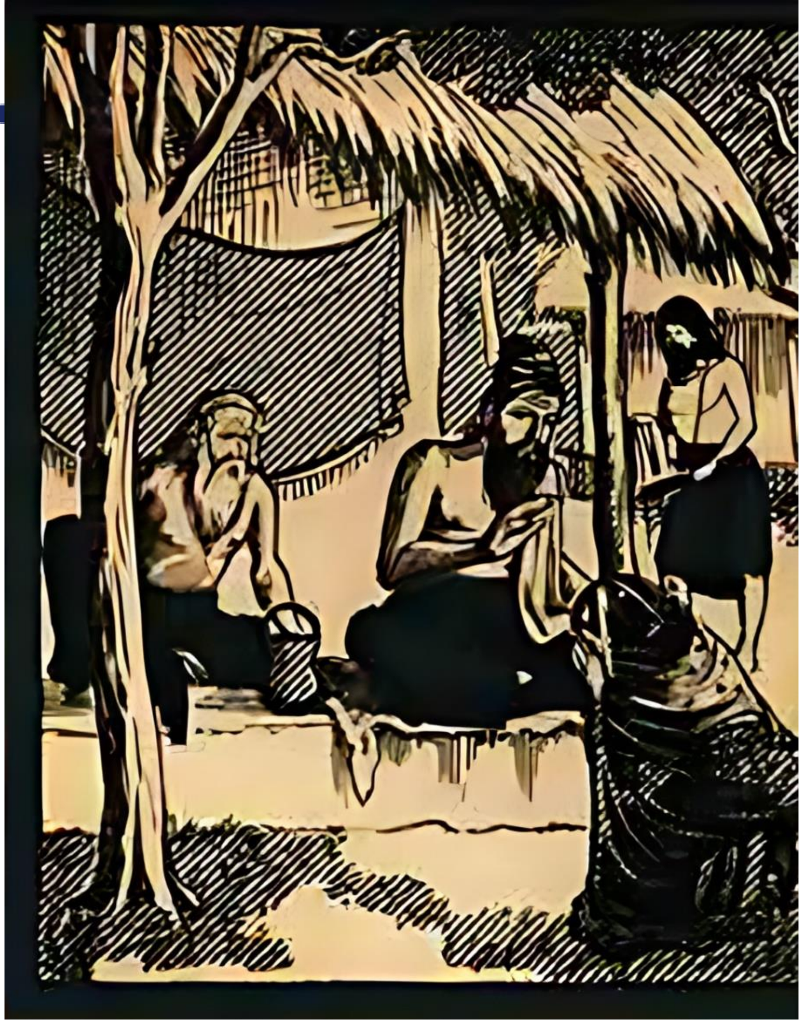
परन्तु साल्व राजा ने अपना निश्चय न बदला-"क्यों मुझे यों सताती हो? तुम जहाँ चाहो वहाँ चली जाओ। हम सबसे युद्ध करके भीष्म ने तुम्हें अपना बनाया है। भीष्म का नाम याद आते ही मैं गुस्से से काँपने लगता हूँ। मैं तुमसे विवाह नहीं कर सकता।"

अम्बा रोती रोती साल्व नगर से चली गई। वह अपनी दुस्थिति अच्छी तरह समझ गई। वह न अपने पिता के घर की रही न भीष्म की हो पाई। न साल्व की ही बन सकी। इतना सब हो जाने के बाद

हस्तिनापुर जाने में कोई अर्थ नहीं था। यदि गई भी तो भी भीष्म उसका आदर न करेगा। सबने उसके साथ अन्याय ही किया। उसके पिता ने बिना उसकी इच्छा जाने घोषित कर दिया कि वह विजेता से विवाह करेगी। भीष्म भी उसकी इच्छा को बिना जाने अपने रथ में हस्तिनापुर ले आया। आखिर सब बातें साफ साफ कहने पर भी साल्व राजा ने उसको ठुकरा दिया। और तो और अम्बा ने स्वयं अपने साथ अन्याय किया था। जब भीष्म रथ पर चढ़ा रहा था तभी वह उसको साल्व राजा के बारे में बताती तो भीष्म उसे छोड़ देता और साल्व राजा उसे स्वीकार कर लेते।

यद्यपि उसके जीवन को कई ने बिगाड़ा था, पर उसका सारा कोप भीष्म पर केन्द्रित था। वह साल्व नगर से निकलकर वन में मुनियों के आश्रम में चली गई। रात उसने वहीं काटी। मुनियों ने उसकी करुणा भरी कहानी सुनी।

उन मुनियों का एक आचार्य था, जिसका नाम शैखावत्य था। उसने अम्बा से कहा-"हम सब तो मुनि,



तपस्वी हैं। हम तेरे कष्टों के निवारण के लिए क्या कर सकते हैं?"

अम्बा ने दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करके कहा-"स्वामी, आपकी कृपा मेरे लिए काफी है। यदि आप मुझे तपस्या करना सिखा दें तो मैंने कठोर तपस्या करने का निश्चय किया है। पिछले जन्मों के पाप के कारण मेरी यह हालत है कि धूप पानी से बचने के लिए कोई आश्रय नहीं है। मेरी और कोई अभिलाषायें भी नहीं रह गई हैं। मुझे भी आपके साथ तपस्या करने का अवकाश दीजिये।"

अम्बा को देखकर आश्रमवासियों को दया आई। उन्होंने आपस में उसकी समस्या पर सोचा विचारा। कई ने सुझाया कि उसको पिता के पास भेज देना उचित था। कई ने कहा कि उसकी दुस्थिति का कारण भीष्म ही था। कई और ने जोर दिया कि जैसे भी हो उसको साल्व राजा के पास पहुँचाना ही उत्तम था।

आखिर सब ने मिलकर अम्बा से कहा-"तुम्हारे लिए पिता के घर वापस जाना ही श्रेयस्कर है। स्त्री को या तो पिता के घर रहना चाहिये नहीं तो पति के घर। तीसरी जगह रहना गलत है। हो सकता है कि पिता के घर तुम्हें सुख न मिले; पर यहाँ तपस्या करने से तो वहाँ कितना ही अच्छा रहेगा। तुम जैसी कोमल राजकुमारियों के लिए तपस्या सम्भव नहीं है। यही नहीं, अगर यह पता लग गया कि इस आश्रम में तुम जैसी सुन्दरी है तो जाने कहाँ कहाँ से राजा तुम्हें यहाँ खोजते खोजते आयेंगे। इससे काफी गड़बड़ी होगी।"

अम्बा ने नमस्कार करके प्रार्थना की-"महाशयो, मैं कभी बहुत ही आदर के साथ अपने पिता के घर पाली पोसी, बड़ी की गई। वहाँ जाकर तिरस्कृत होना मुझे बिल्कुल पसन्द नही है। मैं काशी वापस जाकर पिता को अपना मुँह नहीं दिखा सकती। इसलिए मैं भी इस अरण्य में तपस्या करूँगी। इस तपस्या के कारण सम्भव है कि मैं परलोक में सुख पाऊँ। मेरी इच्छा है कि जो कष्ट अब मैंने भुगते हैं, वे कष्ट मुझे कहीं और किसी जीवन में न भुगतने पड़े। इसलिए कृपा करके मुझे तपस्या व्रत में दीक्षित कीजिये।"





[११]

[चन्द्रवर्मा, जो भैरण्ड पक्षियों के पंखों में छुपा हुआ था, झील में जा गिरा। फिर झील के मगरों से जान बचाकर, वह झील के किनारे वाले बाग में गया। एक दिन रात को चन्द्रवर्मा शंख के पहाड़ पर चढ़ रहा था कि उसको, पहाड़ के नीचे, पत्थरों में, आदूगरनी कपालिनी दिखाई दी। बाद में....]

पत्थरों के बीच बेहोश-सी पड़ी कपालिनी को कराहता देख चन्द्रवर्मा हैरान रह गया। उसे तुरन्त अग्निपक्षी की बह बातचीत याद हो आई, जो उसने मैरण्ड पक्षियों से की थी। उसने सोचा कि वह भैरण्ड पक्षियों के हाथ आ गई होगी और शंख के इस पहाड़ी प्रदेश में लाकर पटक दी गई होगी।

"कपालिनी ! तुम्हें ऐसी कोई चोट तो नहीं लगी है, जिससे जान को खतरा हो? वे मैरण्ड पक्षी कहाँ हैं?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

कपालिनी ने धीमे से कहा-"जोर से न बातचीत करो। किसी गुफा में चला जाना अच्छा है। वहाँ जाकर सब कुछ बताऊँगी। मेरी जान को कोई खतरा नहीं है। अपने हाथ का सहारा दो। तब मैं उठकर चल सकूँगी।" चन्द्रवर्मा कपालिनी की तरफ झुका। दाहिने हाथ



से उसका कन्धा पकड़कर, उसे उठने में मदद की। फिर कपालिनी ने चन्द्रवर्मा का हाथ पकड़कर चलते हुए कहा-"बर्मा, उन पेड़ों के पीछे, लगता है कोई गुफा है। चलो, वहाँ चलें।"

छोटे-छोटे पत्थरों के ऊपर से चढ़ते उत्तरते थोड़ी देर में, वे पहाड़ की तराई में, एक अन्धेरी गुफा में पहुँचे। उस गुफा का मुँह बहुत तङ्ग था। उसको चारों तरफ से पेड़, पौधे, पत्तों ने ढक रहा था। गुफा अन्दर काफी बड़ी थी। कहीं कहीं ऊपर के छेदों से प्रकाश की छोटी-छोटी किरणें आ रही थीं।

कपालिनी के एक कोने में बैठने के बाद चन्द्रवर्मा ने पूछा-"क्या मान्त्रिक शंख को मालूम हो गया है कि तुम इस पर्वत प्रदेश में काई गई हो, कपालिनी?"

कपालिनी मुस्कराई। उसे मरने का डर कहीं भी न था।

"बर्मा! अगर शंख को मालूम होता कि मैं इस पर्वत प्रदेश में हूँ, तो वह अब तक मुझे मार देता। मैं कल सवेरे से इन पत्थरों में पड़ी थी। जिस भैरण्ड पक्षियों ने अचानक मुझे पकड़ना चाहा था वे काल सर्प के हाथ लगे और मार दिये गये।" कपालिनी ने कहा।

"अगर यह बात है तो हमें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं इस अन्धेरे में जाकर पता लगता हूँ कि शंख का पूजा गृह वगैरह, कहाँ है।" कहता चन्द्रवर्मा उठा।

कपालिनी ने चन्द्रवर्मा को सावधान करते हुए कहा-"वर्मा, उस अग्नि पक्षी की बात न भूल जाना, रात के समय उस पक्षी के विषय में चौकना रहना होगा। दिन के समय शंख से बचकर रहना होगा। अगर आज रात अग्नि पक्षी से हमें छुटकारा न मिला तो हमारा भला

न होगा। उसकी खबर लेने के लिए कालसर्प कोशिश कर रहा है।"

"क्या कालसर्प यहाँ आया हुआ है? बहुत आश्चर्य हो रहा है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

चन्द्रवर्मा की बात सुनकर कपालिनी हँसी। "बर्मा! मैं जान गई कि कालसर्प को मुझसे अधिक भरोसा तुम पर है। यकायक जब तुम मुझे यहाँ दिखाई दिये, तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। मैंने यह भी नहीं पूछा, तुम इतनी जल्दी यहाँ कैसे पहुँच गये? इसीलिए क्योंकि कालसर्प ने तुम्हारे बारे में मुझे सब कुछ बता दिया था। जब मुझे मालूम हुआ कि तुमने आश्चर्यजनक वृक्ष का फल खाया है, तभी मैं जान गई थी कि तुम यहाँ सुरक्षित पहुँच सकोगे।" कपालिनी ने कहा।

कपालिनी ने अभी अपनी बात स्वतम भी न की थी कि उस इलाके में बिजली-सी कौंधी और सब जगह प्रकाश हो गया। चन्द्रवर्मा अचरज करता, गुफा के मुँह के पास आया। उसने झाँककर बाहर देखा। पास के पेड़-पौधों के पीछे अग्नि पक्षी दिखाई दिया। तुरन्त फण उठाकर



कालसर्प का उसपर झपटना उसने देखा।

"कपालिनी! अग्नि पक्षी के ऊपर कालसर्प झपट रहा है। मैं जाकर कालसर्प की सहायता करूँगा?" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"नहीं, ऐसा न करो।" कहती कपालिनी गुफा के द्वार के पास आई। बाहर झाँककर उसने कहा- "मुझे विश्वास है, शंख के इस नौकर को कालसर्प मार सकेगा। अगर वह न मार सका, तो हम दोनों को उससे खतरा है। अग्नि पक्षी ने देख लिया होगा कि भैरण्ड पक्षी मुझे



यहाँ ले आये हैं। इससे पहले कि यह बात वह अपने मालिक से कहे, उसको मार देना अच्छा है।"

इस बीच, अग्नि पक्षी और कालसर्प एक दूसरे को मारने का पूरा प्रयत्न कर रहे थे। भयङ्कर युद्ध हो रहा था। अग्नि पक्षी अपनी चोञ्च से, तीनों सिरों को तोड़ने मोड़ने का पूरा प्रयत्न कर रहा था। अग्नि पक्षी के नाखूनों से फिसलकर उसकी पकड़ से छूटते ही, अपने दान्तों से अग्नि पक्षी के पेट को काटने की कालसर्प कोशिश कर रहा था। अग्नि पक्षी के शरीर से जो लपटें उठ रही थीं उसके कारण कालसर्प भुना सा जा रहा था।

कालसर्प के मुख से जो विष-वायु निकल रही थी, उसके कारण अग्नि पक्षी की हालत बुरी हो रही थी। वह थका माँदा था, आँखें बन्द करके, उससे भिड़ने का प्रयत्न कर रहा था।

"अगर इनका शोर, शंख के कानों में पड़ गया, तो हम दोनों पकड़े जायेंगे।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"ऐसा न होगा। शंख को विश्वास है, जब उसका नौकर अग्नि पक्षी पहरे पर होगा, तब उसको कोई खतरा नहीं है। इसी वजह से, वह अन्धेरा होते ही सो जाता है। फिर सूर्योदय से कुछ देर पहले ही वह उठता है। उसकी आदतें मुझसे छुपी नहीं हैं।" कपालिनी ने कहा।

इतने में अग्नि पक्षी ने जोर से चिल्लाना चाहा, पर आवाज़ न निकली। उसका गला ढीला हो लटक गया। अपने तीन सिरों से कालसर्प ने उसका गला घोंट दिया और जब उसने गला लटका दिया, तभी उसने अपनी पकड़ ढीली की और एक तरफ झुक गया।

"जय कालसर्प, जय बीरसर्प" चिल्लाना चाहा, पर इतने में रुक गया और बहुत उत्साह के साथ चन्द्रवर्मा गुफा के बाहर कूदा। कपालिनी में भी जाने कहाँ से ताकत आ गई, वह भी चन्द्रवर्मा के साथ बाहर निकली।

चन्द्रवर्मा और कपालिनी, जब उसके पास पहुँचे तो कालसर्प जमीन से चिपका पड़ा था। उन दोनों को पास खड़ा देख, गौरवार्थ उसने अपने सिर ऊँचे किये। चन्द्रवर्मा ने, कालसर्प के पास जाकर प्रेम से उसका शरीर सहलाया। अग्नि पक्षी की लपटों के कारण कालसर्प का शरीर कहीं कही जल गया था; कहीं कहीं चमड़ा उखड़ गया था।

अपने सेवक की बुरी हालत देख, प्रेम से उसके सिरों को छूकर कपालिनी ने कहा-"कालसर्प, आज से तुम्हारे कष्ट समाप्त हो गये हैं। ज्योंहि पूजागृह से अपूर्व शक्तिवाला शंख हमारे हाथ आ जायेगा, त्योदि तुम्हें मानव रूप दे दूँगी। उसके बाद, तुम जहाँ चाहो वहाँ चले जा सकते हो।"

शंख के पूजागृह का नाम सुनते ही, चन्द्रवर्मा चौकन्ना हो गया। उसने पूर्व





की ओर नजर दौड़ाई। "कपालिनी, लगता है, सूर्योदय में काफी देरी नहीं है। मैं अब जाकर उस मान्त्रिक के पूजागृह के बारे में पता लगता हूँ।"

कपालिनी ने भी थोड़ी देर पूर्व दिशा की ओर देखा-"तुम्हारा इस समय उसके पूजागृह में जाना ठीक नहीं है। उसका खातमा करने के लिए मैंने एक और उपाय सोचा है।" कपालिनी ने कहा।

"क्या है वह?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

शंख हर रोज, सूर्योदय के समय, पूर्व दिशावाले पहाड़ के किनारे जाकर, वहाँ एक पत्थर पर खड़े होकर, चारों तरफ घूमता मन्त्रोचारण करता है। वह पत्थर एक फुट बड़ा, एक फुट ऊँचा है। उस पत्थर के उस तरफ हजार गज की सीधी ढलान है। खड्ड है। अगर जो कुछ मैं कहूँ तुम कर सके तो शंख को उस पत्थर से उस खड्ड में यदि धकेल दिया गया, तो उसका शरीर टुकड़े-टुकड़े हो सकता है।" कपालिनी ने कहा।

"क्या है वह?" चन्द्रवर्मा ने उत्साहपूर्वक पूछा।

"वह क्या है, बताती हूँ। जरा पास आओ।" चन्द्रवर्मा के पास आते ही, कपालिनी ने उसके कान में कुछ कहा। "मालूम है, इस काम को बहुत छुपकर करना है। किसी को कुछ न पता हो। कहीं गलती हुई तो सर्वनाश हो जायेगा।"

चन्द्रवर्मा, खड़ा खड़ा कुछ देर सोचता रहा। फिर वह पासवाले एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ गया। पूर्व दिशा की ओर थोड़ी देर देखकर, नीचे उतरकर, उसने कपालिनी से कहा-"कपालिनी! सूर्योदय में अभी अधिक समय नहीं है। मैं अपने काम पर जाता हूँ। तुम और काल सर्प, गुफा में

आराम करो।" म्यान में से तलवार निकालकर पेड़ों के झुरमुट में चला गया। देखते देखते चन्द्रवर्मा ने पेड़ों से लटकती जड़ों को काटा, उन जड़ों को एक जगह इकठ्ठा करके एक लम्बी रस्सी तैयार की। उस रस्सी के एक सिरे को कन्धे पर डाल जल्दी जल्दी पहाड़ पर चढ़ गया। पूर्व के पहाड़ के किनारे पड़े एक फुट के पत्थर के चारों ओर रस्सी बाँध दी। मान्त्रिक शंख, रोज सूर्योदय से पहले उसी पत्थर पर खड़े होकर, चारों तरफ घूमकर मन्त्रोच्चारण किया करता था।

काम खतम होते ही, चन्द्रवर्मा पहाड़ से उतरकर, उस गुफा के पास आया, जहाँ कपालिनी थी। उसको गुफा के सामने खड़ा देख कपालिनी ने बाहर आकर पूछा- "क्या काम सफलतापूर्वक हो गया है?"

"अभी सफलता के बारे में कैसे कह सकता हूँ? रस्सी के एक सिरे को, उस पत्थर से बाँध आया हूँ। दुसरा सिरा पहाड़ के नीचे है, पर मुझे एक सन्देह सता रहा है, यदि उस पत्थर को पूर्व दिशा की ओर



खीचेंगे, तभी ही तो शंख, खड्ड में गिरकर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

"तो तुम्हारा सन्देह यह है?" कपालिनी ने मुस्कराते हुए कहा- "खैर, शंख के उस पत्थर पर चढ़ते ही जिस रस्सी के सिरे को खींचना है, वह सिरा कहाँ है, मुझे बताओ। तुम्हारे सन्देह सब दूर कर दूँगी।"

कपालिनी चन्द्रवर्मा के साथ पहाड़ के पास गई। वहाँ उसने रस्सी का सिरा दिखाया। कपालिनी ने उसको छुआ, फिर पूरब की ओर पहाड़ के किनारे को

देखकर कहा-"वर्मा, क्योंकि वह पत्थर, जिस पर खड़े होकर शंख मन्त्रोचारण करता है, पहाड़ के बिल्कुल किनारे पर है, अगर उसे किसी तरफ भी हिलाया गया तो वह नीचे खड्ड में जा गिरेगा। इस बारे में कोई सन्देह करने की जरूरत नहीं है।" कहते कहते उसने आँखें बड़ी की और चन्द्रवर्मा की ओर सिर झुकाकर कहा-"देखो, वह है शंख, हाथ में चमचमाता जादू का डण्डा दिखाई दे रहा है न? उसके पत्थर पर चढ़ते ही तुम जोर से रस्सी खींचो।" उसने दबी आवाज में यह कहा।

चन्द्रवर्मा ने पहाड़ के ऊपर देखा। सवेरे के मन्द मन्द प्रकाश में उसको मान्त्रिक का विकृत रूप दिखाई दिया। एक क्षण चन्द्रवर्मा काँप गया, फिर सम्भलकर दोनों हाथों से, जोर से रस्सी पकड़ ली।

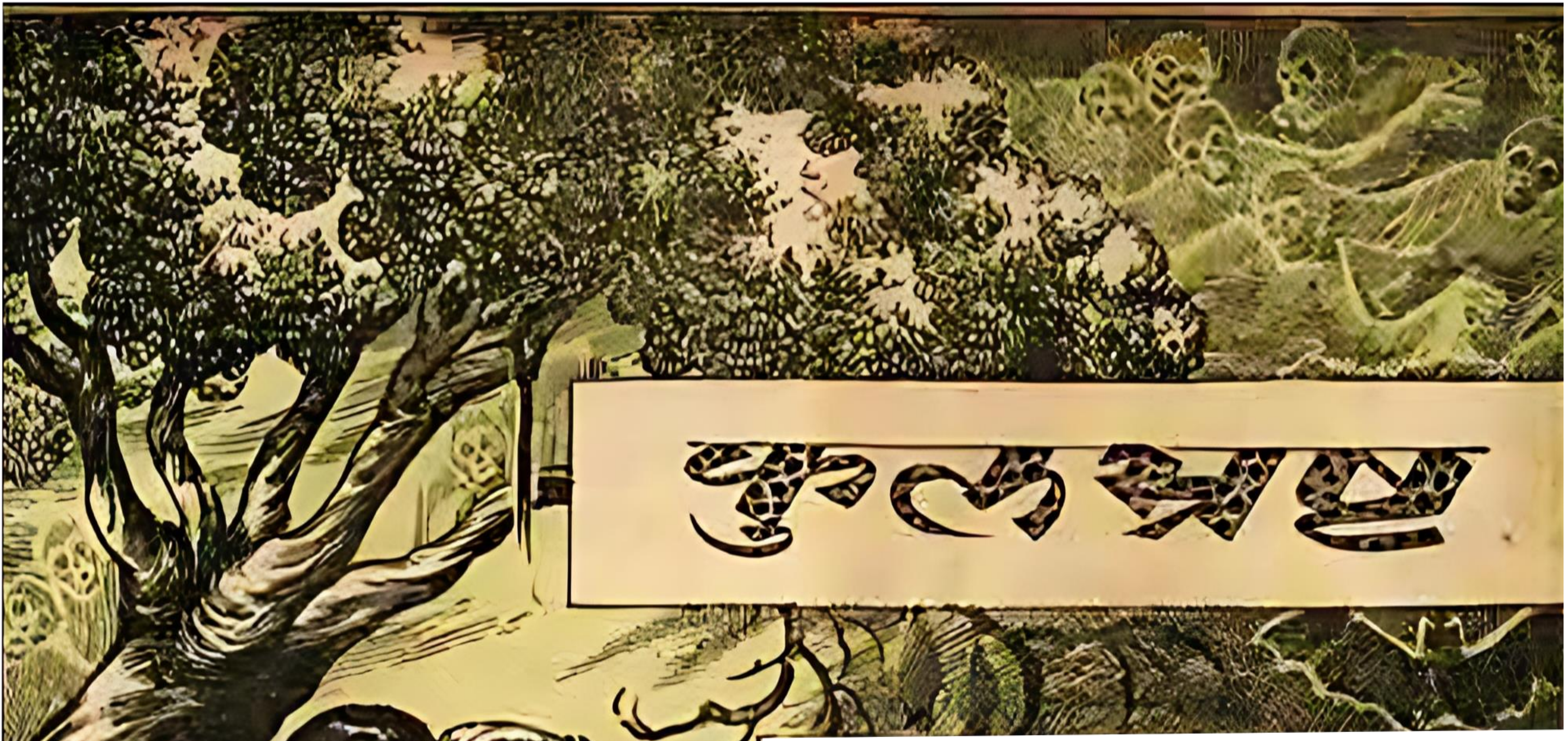
इतने में शेख ने पहाड़ के किनारे के पत्थर के पास आकर उस पर खड़े होकर, जादू के डण्डे को उदय होते सूर्य की ओर उठाया।

"वर्मा, यही समय है। रस्सी को एक बार खींचकर तुरन्त ढीला कर दो।" कशलिनी ने कहा।

चन्द्रवर्मा ने जोर से एक बार रस्सी खींची, फिर उसे छोड़ दिया। उस समय संख हाथ ऊपर उठाकर हिलाने लगा, पैरो से हवा मथने-सा लगा। जोर से चिल्लाया-दगा, धोखा।" उसके हाथ का जादू का डण्डा चमका, पूजा गृह के पास पहुँचा। पूजा गृह में भयङ्कर विस्फोट-सा हुआ, जोर से आवाज करता झील में जा गिरा। और शंख नीचे खड्ड में पत्थरों पर औधे मुँह जा गिरा।

(अभी है)







विकमार्क ने हठ न छोड़ा। यह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार, कन्धे पर डाल श्मशान की ओर चुपचाप चल पड़ा। तब शब में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! तेरा हठ विचित्र है। बहुत हठी परिश्रमी लोग भी जब हार जाते हैं तो पछताते हैं। यह दिखाने के लिए तुम्हें प्रतापवर्मा की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने तब यह कहानी सुनाई:-

किसी जमाने में, उदयगिरि प्रान्त में एक राजवंश से सम्बन्धित युवक रहा करता था। उसका नाम प्रतापवर्मा था। उन दिनों उदयगिरि सम्पन्न प्रदेश न था। सब जगह पहाड़ ही पहाड़ थे। इसलिए काफी खेतीबाड़ी न होती। पहाड़ों के लोग बहुत गरीब थे। पर बहुत साहसी



थे। धार्मिक भी। इनके साथ कुछ धनी लोग भी थे।

प्रतापवर्मा का पिता खानदानी आदमी था। प्रताप उसका दूसरा लड़का था। उसका बड़ा लड़का दो तीन वर्ष के लिए देश का पर्यटन करने के लिए गया हुआ था। उसकी पाँच वर्ष की, हेमा नाम की लड़की थी।

प्रताप के पिता के घर बहुत-से गुलाम रहा करते थे। वे सब किसी पहाड़ी जाति के थे। उन गुलामों में से, एक स्त्री से प्रताप को प्रेम हो गया। प्रताप ने उस स्त्री से विबाह करने के लिए पिता की अनुमति माँगी। पिता यह जानकर आगबबूला हो गया-"मैं हरगिज़ न मानूँगा कि तुम एक पहाड़ी जाति की लड़की से शादी करके, उसको मेरी बहू बनाओ। अगर तुमने ऐसा बाहियात काम किया, तो मैं कुल से बहिष्कार करा दूँगा।"

इस बात पर वह पिता से झगड़कर घर से चला गया। और अपनी प्रेयसी के साथ विवाह करके, वह पहाड़ों में रहने लगा।

"यह आज से मेरा लड़का नहीं है। यदि यहाँ वापस आये, तो इसे मरा ही समझना।" प्रताप के पिता ने अपने नौकरों से कहा।

पहाड़ी जाति की स्त्री से शादी करके, प्रताप को किसी प्रकार का सुख न मिला। वह रईसी ठाठ-बाट से पाला गया था, इसलिए पहाड़ी जातिवालों की तरह जीना उसके लिए बहुत कठिन हो गया। वह स्त्री चूँकि अब अपनी जाति के लोगों में

रह रही थी, इसलिए वह प्रताप के मान-मार्यादाओं और तौर-तरीकों का तिरस्कार-सा करने लगी। इस ज़िन्दगी से बचने के लिए प्रताप सेना में भरती हो गया।

उदयगिरि पर पास के एक राजा ने हमला किया। युद्ध हुआ। उदयगिरि की सेना के साथ पहाड़ी जाति के लोग भी लड़े। परन्तु उदयगिरि की हार हुई। उदयगिरि के सब सम्पन्न लोग हार मानकर नये राजा के सामने झुक गये। परन्तु पहाड़ी जातिबालों ने हार मानना स्वीकार न किया। उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी और जो सेना उनके इलाके में भेजी जाती वे उसका मुकाबला करने लगे। अब सिवाय लूटमार के, उनके सामने जिन्दगी बसर करने का और कोई रास्ता न था।

प्रताप युद्ध में उदयगिरि की सेना के साथ लड़ा। उदयगिरि जब हार गया और जब उसने शत्रु से सन्धि करली, तो उसने अपने पिता के पास जाकर कहा-"पिताजी, मुझे क्षमा कीजिये, जो कुछ मैंने किया, मैं उसके लिए पछता रहा हूँ। मुझे आप फिर अपने पुत्र के रूप में स्वीकार कीजिये।"

परन्तु पिता ने कहा-"तू मेरा लड़का नहीं है। मेरे घर में तेरे लिए स्थान नहीं है। तू जिस काम पर आया था, अगर वह हो गया हो तो तू वापस



जा सकता है। मुझे तुझ से कोई बातचीत नहीं करनी है।"

किसी में यह हिम्मत न थी कि उसकी बात का विरोध करे। पाँच वर्ष की लड़की हेमा ने प्रताप से लिपटकर कहा-"चाचाजी। आप मत जाओ। यहीं रहो।"

"बेटी, बाबा मुझे जाने के लिए कह रहे हैं, मैं यहाँ कैसे रह सकता हूँ?" प्रताप ने पूछा।

हेमा अपने बाबा के पास जाकर रोई। उससे कहा कि वे चाचा को न जाने दें। परन्तु बूढ़ा अपनी जिद पर अड़ा रहा।

प्रताप फिर पहाड़ों में चला गया, पहाड़ी जातिवालों ने उसका खूब आदर सत्कार किया और कहा कि वे उसको सरदार बनाना चाहते थे। प्रताप ने उनका सरदार होना स्वीकार कर लिया। इसके बाद पहाड़ी जाति का बल दस गुना अधिक हो गया। इसका कारण यह था कि प्रताप युद्ध शास्त्र जानता था। यह वे पहाड़ी लोग नहीं जानते थे। यही नहीं, औरों की अपेक्षा पहाड़ी जाति के लोगों में, धैर्य, साहस, सच्चरित्र और नियन्त्रण अधिक थे। अगर सरदार के लिए आन न्योछावर करनी पड़ जाये तो वे खुशी खुशी करेंगे। सरदार द्वारा निश्चित नियमों का प्राणों के जाने पर भी वे उल्लंघन न करेंगे।

"मैं तुम्हारे लिए अपना जीवन अर्पित कर दूँगा। पर यह जान लो कि भविष्य तुम्हारे साथ नहीं है। हम अगर घनियों को न लुटेंगे, तो हम न जी पायेंगे। इसलिये वे हमारा इस तरह शिकार करेंगे, जैसे हम कोई जङ्गली जानवर हों। अगर हम इन पहाड़ों को पार करके गये तो हम बेकार हो जायेंगे। बाकी दुनियाँ उनके साथ रहेगी।



अगर हम अभी झुक गये, तो गुलामों की जिन्दगी ही सही, कम से कम जीते तो रहेंगे। परन्तु यदि हमने स्वतन्त्रता के लिए युद्ध शुरू किया तो हमारा सर्वनाश होकर रहेगा। इसलिये यह निश्चय कर लो कि स्वतन्त्रता के लिए मरना चाहते हो या गुलामों की तरह जीना चाहते हो।" प्रताप ने उनको आगाह किया।

पहाड़ी जातिबालों ने लड़ने का निश्चय किया। आखिर प्रताप ने शपथ की, वह युद्ध में उनका अग्रणी रहेगा। उसके बाद, जब लोग पहाड़ी डाकुओं का नाम सुनते तो डर से काँप उठते। वे कहाँ छुपे हुए हैं.... कब कहाँ आकर धावा बोलेंगे, किसी को न मालूम था। कितने ही डाके लगाये गये, पर डाकू कभी न दिखाई दिये। उन पहाड़ों में से जाने के लिए उदयगिरि के लोग डरा करते।

उदयगिरि पर आक्रमण करनेवाली सेना में विजयवर्मा नाम का एक योद्धा था। युद्ध के समाप्त होने के कुछ समय बाद, वह अपने देश के लिए वापस रवाना हुआ। उसके साथ उसका एक नौकर था। लोगों ने उससे





कहा कि वह पहाड़ी रास्ते से न जाये। उसको जाने का अलग रास्ता भी बताया।

विजय, निशानियाँ देखता देखता पहाड़ी रास्ते पर चला। कुछ दूर जाने के बाद वह भटक गया। सूर्यास्त से पहले उसे एक ग्राम पहुँचना था। पर वह ग्राम न आया। अन्धेरा तो था ही, कोहरा भी छा गया। विजय ने अपने नौकर से कहा-"कहीं कोई झोंपड़ा दिखाई दिया तो वहीं पड़ाब करेंगे। कहीं कोई टिमटिमाती रोशनी दिखाई पड़ जाये.... तुम भी चौकन्ने होकर देखते रहो।"

अन्धेरा होने के बाद भी वे चलते रहे। कहीं उनको कोई न दिखाई दिया। आखिर नौकर ने पूछा-"क्यों मालिक! वहाँ कोई चिराग दिखाई दे रहा है न?" कोहरे में से उनको कुछ अस्पष्ट प्रकाश दिखाई दे रहा था। यह सोचकर कि वहाँ कोई न कोई आदमी होगा.... वे जल्दी जल्दी उस रोशनी की ओर चले। वे चलते चलते एक पहाड़ की तलहटी में पहुँचे।

वह पहाड़ बड़ा विचित्र था। उसका एक किनारा बिल्कुल दीवार की तरह था। उसी तरफ एक गुफा-सी थी। उस गुफा में से रोशनी आ रही थी। दीवार-सी, उस चढ़ाई को पार कर, उस गुफा तक पहुँचना मनुष्य के लिए सम्भव न था। फिर भी उस गुफा में आदमी ज़रूर होंगे.. अगर वे डाकू भी हो तो उनसे पनाह माँगनी ही होगी। इसलिए विजय जोर से चिल्लाया।

उस गुफा में पहाड़ी डाकू ही थे। वह बहुत बड़ी गुफा थी। उसमें कई आदमियों के रहने की जगह तो थी ही, कई महीनों के लिए रसद रखने की भी थी। प्रताप भी उसी गुफा में रहा करता था।

विजय की आवाज़ सुनकर पहाड़ियों ने गुफा में से झाँककर देखा। उन्होंने रस्सी की एक सीढ़ी नीचे उतारी...."अपने घोड़ों को नीचे छोड़कर, सीढ़ी चढ़कर आओ। तुम्हारे घोड़ों का कोई कुछ नहीं बिगाड़ेगा।"

उसे विश्वास न था कि वह फिर अपना घोड़ा देख सकेगा, या वह उस गुफा से जीवित आ सकेगा। फिर भी हिम्मत करके नौकर के साथ सीढ़ी चढ़कर गुफा में आ गया।

गुफ़ा में उनको भोजन दिया गया। उनसे किसी ने कुछ नहीं पूछा। सवेरे प्रताप ने आकर विजय से पूछा-"तुम्हारे जाने का समय हो गया है। तुम्हारे घोड़ों को भी दाना-पानी दे दिया गया है। अगर चाहो तो मैं तुम्हारे साथ थोड़ी दूर चलकर तुम्हें रास्ता दिखाऊँगा।"

"कल रात जो आपने हमारा आतिथ्य किया, हम उसे कभी न भूल पायेंगे।" कहते हुये विजय ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की। फिर वह और उसका नौकर, पहाड़ पर से उतर आये। घोड़ों पर सवार हो



चले गये। प्रताप उनके साथ एक कोस तक गया और उनको उनका रास्ता उसने दिखाया।

विजय ने उससे पूछा- "आप कौन हैं? इस गुफा में क्यों रहते हैं? यहाँ आपको क्या सब सुविधायें हैं?"

"हम पहाड़ी डाकू हैं। हमारे बारे में आपने बहुत-सी बातें सुनी होंगी। उन में बहुत-सी झूठी हैं। यह आपको अब मालूम ही हो गया होगा। मैं इनका सरदार हूँ। पर मैं पहाड़ी जाति का नहीं हूँ। मैं होने को तो राजवंश का हूँ पर परिस्थितिवश मैं इनका सरदार बना।

फिलहाल तो जिन्दगी आराम से कट रही है। पर मैं जानता हूँ कि बहुत दिनों तक इस तरह की जिन्दगी नहीं चल सकती। जब हमारे आखिरी दिन पास आ जायेंगे, तब मैं आपके पास खबर भेजूँगा। तब आप मुझे देखने आइये। मैं अपनी इस इच्छा के लिये क्षमा चाहता हूँ।" प्रताप ने कहा।

कुछ वर्ष बीत गये। राजा ने घोषणा की कि कुछ भी हो, डाकुओं का सर्वनाश करना होगा। राजा ने कुछ सेना को उदयगिरि के पहाड़ों में भेजा। उस सेना के साथ विजय भी था।

सेना घायल हो रही थी, फिर भी डाकू घेरे जा रहे थे। भयङ्कर अन्तिम लड़ाई में प्रताप घायल हुआ और पकड़ लिया गया। कई पहाड़ियों ने, स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। कुछ जीते जी पकड़े गये।

यह जानकर, युद्ध में पकड़े गये किसी कैदी ने उसके लिए खबर भिजवाई है, विजय उससे मिलने गया। पहले तो विजय प्रताप को न पहचान सका। बारह वर्षों में प्रताप बहुत बदल गया था। यही नहीं, विजय को यह भी विश्वास न था कि



इतने समय तक प्रताप डाकुओं का सरदार बना रहेगा। उसका ख्याल था कि वह कभी का, उन्हें छोड़कर चला गया होगा।

प्रताप ने इस बार विजय को अपनी असली कहानी सुनाई-"मैं निश्चित रूप से मरने जा रहा हूँ। मेरे पिता के घर सिवाय हेमा के मेरे लिये कोई रोनेवाला नहीं है। मेरा जीवन सफल हो गया है। मुझे किसी से भी, पिताजी से भी नहीं, कोई ईर्ष्या द्वेष नहीं है। मैं खुशी खुशी मर रहा हूँ। मेरे लिये कोई दुखी न होवे।"

कहकर उसने अपनी अंगुली की अंगूठी उतारकर विजय को दी।

विजय ने उस अंगूठी को ले जाकर हेमा को दी। फिर हेमा ने विजय के साथ विवाह किया। वे दोनों प्रायः प्रताप के बारे में बातचीत करते और खुश होते।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजा, प्रतापवर्मा का स्वभाव कैसा था? वह एक पहाड़ी जाति की लड़की के लिये क्यों अपनी जाति से अलग हो गया? अलग हो जाने के बाद, फिर जाकर पिता



से क्यों माफी माँगी? क्योंकि उसको स्त्री से सुख न मिला था, इसलिये क्या वह अपने किये पर पछता रहा था? अगर पछता रहा था तो वह फिर पहाड़ी जाति वालों के पास क्यों गया? क्यों उनका सरदार बना? क्या इस गुस्से में कि पिता ने उसको क्षमा नहीं किया था? अगर यह बात थी तो उसने मरते समय यह क्यों कहा कि उसे किसी पर कोई गुस्सा न था? इन प्रश्नों का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।

विक्रमार्क ने कहा-"प्रताप अपने किसी भी काम के लिए नहीं पछताया। उसका स्वभाव ही कर्तव्य के लिए कुर्बान होनेवाला स्वभाव था। जिससे प्रेम किया था, उसके साथ विवाह करना उसने अपना कर्तव्य समझा। शत्रुओं से अपने देश की रक्षा करना अपना कर्तव्य समझकर उसने युद्ध में भाग लिया। युद्ध में हारने के बाद उसने सोचा कि पिता से माफी माँगना उसका कर्तव्य था, इसलिये उसने जाकर माफी माँगी। जब उससे कुछ न हुआ तो उसने सोचा कि स्वतन्त्रता के लिए लड़नेवाले पहाड़ियों की मदद करना उसका कर्तव्य था, इसलिये उसने उनका नेतृत्व किया। जीवन में उसने सुख और आनन्द की आशा न की; इसलिये न उसको उस पत्नी पर ही गुस्सा था, जो उसको सुख न दे सकी, न उस पिता पर ही जो उसे क्षमा न कर सका था, कोई क्रोध था। जो उसने अपना कर्तव्य समझा उसके लिए उसने अपने प्राण छोड़ दिये, इसीलिये उसने अपना जीवन सफल समझा।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

[कल्पित]



खराब स्वभाव

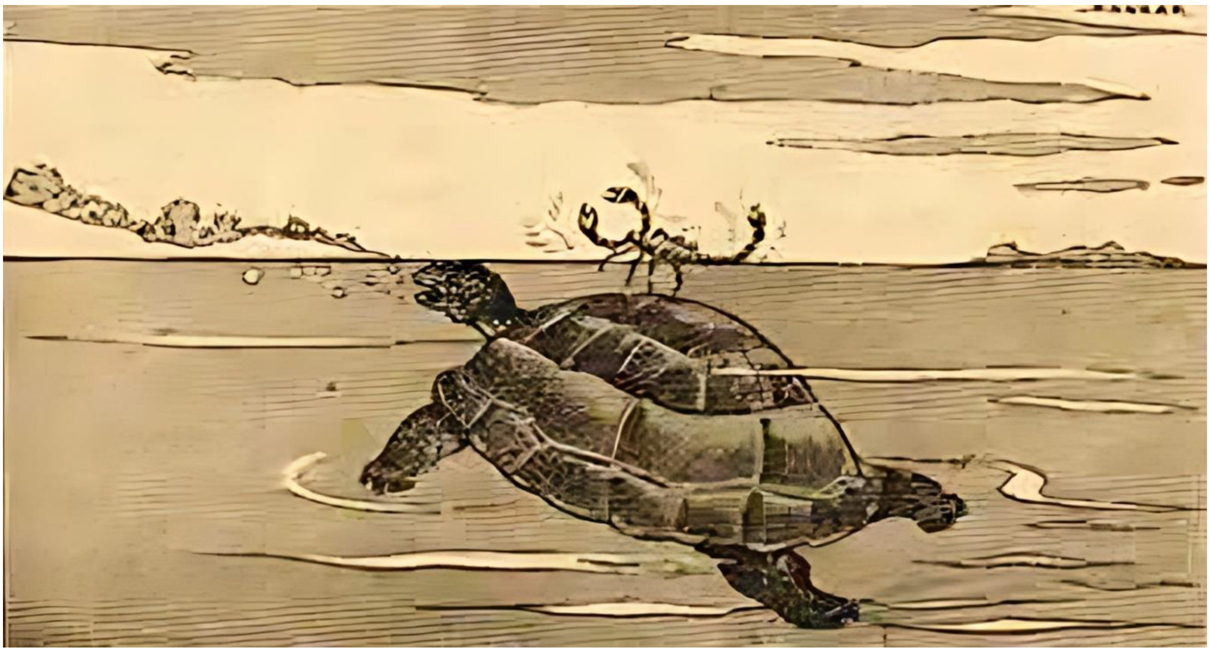
एक बिच्छू को एक नाला पार करना पड़ा। उसने एक कछुवे से कहा-"भाई, जरा मुझे उस पार लगा दो।"

"मैं तुझे अपनी पीठ पर चढ़ाकर पार तो करा दूँ, पर यदि तूने मुझे काटा तो मैं वहीं दूर जाऊँगा।" कछुवे ने कहा।

"क्या मैं इतना नहीं जानता हूँ? अगर तुम डूब गये तो क्या मैं नहीं डूबूँगा?" बिच्छू ने कहा। यह बात कछुवे को अच्छी लगी। वह बिच्छू को चढ़ाकर नाला पार करने लगा।

इस बीच, बिच्छू ने कछुवे को काट ही दिया। कछुवे ने डूबते हुये कहा-"तुम तो कहते थे कि तुम सब जानते थे। मुझे काटा है। क्या हम दोनों नहीं डूबेंगे?"

"हाँ, कहा था, मेरे ज्ञान में कोई कमी नहीं है। मेरा स्वभाव बड़ा खराब है। उसको बदल न सका, इसलिए काट बैठा। क्या करूँ?" बिच्छू ने कहा।





कभी डम्फन नाम का राजा स्कोटलेण्ड पर राज्य किया करता था। उसके सामन्तों में एक मेकबेथ था, जो ग्लामिस का स्वामी

था। वह राजा का तो निकट बन्धु था ही, अनेक युद्धों में धैर्य, साहस दिखाकर उसने राजा का आदर-अभिमान भी पा रखा था।

राजा के सामन्तों में एक और सामन्त था, जो काड़र का स्वामी था। वह ऊपर ऊपर से तो राजमक्ति दिखाता; पर अन्दर ही अन्दर वह राजा के विरुद्ध षड़यन्त्र कर रहा था। उसके षड़यन्त्र के परिणाम स्वरूप नोरवे से एक बड़ी सेना स्कोटलेण्ड पर हमला करने आई।

उस सेना का मुकाबला करने के लिए मेकबेथ अपनी सेना लेकर निकला। उसके साथ बाङ्को नाम का सेनापति भी था। नोरवे की और स्कोटलेण्ड की सेना में भयङ्कर युद्ध हुआ। आखिर मेकबेथ के पराक्रम के कारण शत्रुओं की सेना तितर बितर हो गई।

इस बीच काड़र सामन्त के षड़यन्त्र का भी पता लगा लिया गया। अपना अपराध स्वीकार करने पर उसको फाँसी पर चढ़ा दिया गया। तभी खबर मिली कि मेकबेथ मैदान मारकर आ रहा था। राजा बड़ा खुश हुआ, उसने घोषित किया कि मेकबेथ को काड़र का स्वामी भी नियुक्त करेगा।

युद्ध-भूमि से, बाङ्को के साथ लौटते हुए मेकबेथ को यह बात न मालूम थी। वे कुछ झाडियाँ पार करके आये थे कि उनको यकायक सामने तीन बुढ़ियायें दिखाई दीं। उनमें से एक ने मेकबेथ से कहा-"ग्लामिस के सामन्त की जय।" दूसरे ने

"काडर के सामन्त की जय।" मेकबेथ को यह सम्बोधन समझ में नहीं आया। वह यह भी न जानता था कि काडर के सामन्त ने षड़यन्त्र किया था। तीसरी ने कहा-"होनेवाले राजा की जय।"

मेकबेथ इस बात पर बिल्कुल विश्वास न कर सका। राजा के दो नौजवान लड़के थे। राज्य के उत्तराधिकारी तो वे होंगे, मैं कैसे राजा होऊँगा। असम्भव।

जिन बुढ़ियाओं ने मेकबेथ का इस प्रकार स्वागत किया था, उन्होंने बाङ्को से भी कहा-"तुम मेकबेथ से कम हो, फिर भी अधिक। उससे तुम अधिक भाग्यहीन हो, पर उससे अधिक भाग्यशाली भी। तुम राजा तो न बनोगे, पर तुम्हारे वंशज बनेंगे।" बुढ़ियाओं ने कहा।

"तुम्हारी बातें मुझे बिल्कुल समझ में नहीं आ रही हैं। यह बात तो सच है कि हैं ग्लामिस का सामन्त हूँ। पर मैं काडर का सामन्त कैसे हो गया? मेरे हाथ राज्य कैसे आ सकेगा?" यह मेकवेथ पूछ ही रहा था कि वे तीनों बुढ़ियायें अदृश्य हो गईं। यह आश्चर्य देख दोनों सेनापति चकित हो गये।



इतने में सैनिकों ने आकर मेकबेथ का यों अभिवादन किया-"काडर के सामन्त की जय!" जो कुछ हुआ था, उसे जानते ही, मेकबेथ को बुढ़ियाओं की बात पर विश्वास हो गया। उसे लगा कि शायद उसका राजा बनना भी सच था। उसके दिल में राजद्रोह पनपने लगा। उसने अपनी पत्नी के पास एक पत्र में वह सब लिख भेजा, जो उन बुढ़ियाओं ने कहा था।

उसकी पत्नी वह पत्र पढ़कर बड़ी खुश हुई। बुढ़ियाओं के कथनानुसार मेकबेथ काडर का सामन्त हुआ था। अतः उनके कथनानुसार वह स्कोटलेण्ड का राजा भी बनेगा। बस, डम्फन की हत्या बाकी है। मेकवेथ की पत्नी ने सोचा, कुछ भी हो, वह हत्या जरूर होकर रहनी चाहिये।

मेकबेथ ने राजधानी आकर राजा का दर्शन किया। राजा ने उसकी प्रशंसा की। राजा अपने सामन्तों को देखने के लिए निकला। उसने एक दिन मेकबेथ के घर आराम करके अपनी यात्रा पर आगे जाने का निश्चय किया। उनके आतिथ्य की व्यवस्था करने के लिए मेकबेथ अपने घर पहले गया।





डम्फन को मार कर स्वयं राजा बनने के लिए मैकबेथ के लिए यह अच्छा मौका था। इस बारे में पति पत्नी ने सलाह मशवरा किया। राजा होने की तो उसकी इच्छा प्रबल थी ही; पर वह राजा की हत्या करने के लिए हिचका। राजा बड़ा अच्छा था। अच्छे स्वभाव का था। मेकवेथ को कितने ही अच्छे ढङ्ग से देखता भालता था। किन्तु मेकबेथ की पत्नी ने आगा पीछा न देखा। वह चाहती थी कि हत्या हो और उसका पति राजा हो। इसके अतिरिक्त उसके मन में कोई और इच्छा न थी। उसने अपने पति को बहुत समझा बुझा कर हत्या के लिए मना लिया।

क्योंकि दिन भर सफर किया था, मेकवेथ के घर खाना खाकर राजा तुरन्त सो गया। उसके अङ्गरक्षक को मेकबेथ की पत्नी ने नशे की चीजें दीं। राजा के साथ वे भी नाक बजाने लगे।

ठीक आधी रात के समय मेकबेथ राजा के शयन कक्ष में गया। उसके अङ्गरक्षको की तलवार से ही उसने राजा की हत्या की। उनकी तलवारें फिर उनके बगल में रखकर अपनी पत्नी के पास आकर कहा-"काम खतम कर दिया है।" उसकी अक्ल ठिकाने न थी। उसे इस बात की खुशी न थी कि उसने कोई बड़ा कार्य कर दिखाया था।

राजा ने अपने नौकरों को सवेरे उठाने के लिए कहा था। उन्होंने आकर दरवाजा खटखटाया। मेकबेथ और उसकी पत्नी ने, जैसे तभी सोकर उठे हों आकर किवाड़ खोले। शयनकक्ष में राजा के नौकरों को उसका शव मात्र ही दिखाई दिया। खून से लथपथ तलवारें जिनकी बगल में पड़ी थी, जैसे वे हत्या के लिए

जिम्मेवार हो, मेकबेथ ने उन दोनों को वहीं मार दिया।

इस शोर शराबे में राजा के अनुचर सब उठ गये। उन्हें मालूम होगया कि राजा की किसी ने हत्या कर दी थी। राजा के दोनों लड़कों ने आपस में कुछ सोच साच कर कहा-"किसी ने राजवंश का नाश करने का निश्चय करके पिता जी को स्वाहा कर दिया है। यह इतने से खतम होने वाला नहीं है।" यह सोच वे बिना किसी को कुछ कहे भाग गये। बड़ा लड़का, जो युवराजा था और जिसका नाम माल्कम था इंग्लैण्ड भाग गया और दूसरा आयरलेण्ड भाग गया।

उन दोनों का इस तरह भाग जाना मैकबेथ के लिए फायदेमन्द साबित हुआ। क्योंकि राजा के साथ जो सामन्त आये थे उनमें से किसी एक ने भी न सोचा कि अङ्गरक्षको ने राजा की हत्या स्वयं सोच विचार कर की थी। यह विश्वास आसानी से कर लिया गया कि राजा के लड़कों ने उनको घूस देकर उनसे यह काम करवाया होगा। कहीं यह बात किसी को न मालूम हो जाये इसलिए वे भाग गए हैं। यही नहीं, राजा के बाद कौन राजा हो यह



समस्या भी हल हो गई। राजकुमार फरार थे। सामन्तों में मेकवेथ से राजा का अधिक निकट सम्बधी कोई न था।

मेकबेथ स्कोटलेण्ड की गद्दी पर बैठा। उसकी पत्नी रानी बनी। बुढ़ियाओं की भविष्यवाणी पूर्ण हुई।

परन्तु मेकबेथ के कष्टों का कम होना तो अलग, वे बढ़ते गये। उसकी आत्मा तो उसे तङ्ग कर ही रही थी। अब उसे सन्देह भी सताने लगे थे। बाङ्को उसकी बगल में काँटे के समान था। मेकबेथ को

सब निर्दोष समझ रहे थे। पर बाङ्को आसानी से सच बात का अनुमान कर सकता था; क्योंकि जब बुढ़ियाओं ने भविष्यवाणी की थी, तब वह उसकी बगल में था।

यही नहीं, मेकवेथ के मन को यह बात भी बीन्ध रही थी-"क्या मैंने इतनी दारुण हत्या राज्य को बाङ्को के लड़कों को सौपने के लिए की है?" मेकबेथ को लगा कि जब तक बाङ्को व उसके लड़के की हत्या नहीं कर दी जाती, तबतक उसको शान्ति न मिल सकेगी। उसने दो तीन हत्यारों को बुलवाकर इस बारे में कहा। फिर उसने एक रात अपने घर दावत दी। उसमें सब सामन्तों को निमन्त्रित किया। बाङ्को और उसके लड़के को भी बुलाया।

उस दिन रात को बाङ्को अपने लड़के के साथ दावत के लिए आ रहा था कि मेकबेथ द्वारा नियुक्त हत्यारों ने बाङ्को को मार डाला। उसका लड़का भाग गया। इससे भी मेकबेथ को फायदा हुआ, क्योंकि मेकवेथ सामन्तों को यह विश्वास दिला सका कि उसके लड़के ने ही बाङ्को की हत्या करवाई थी। पर दावत अच्छी तरह



न हो सकी। मेकबेथ जब अपनी गद्दी पर बैठने गया, तब उसको उसपर बाङ्को की आकृति दिखाई दी। उस बाङ्को से जो औरों को नहीं दिखाई दे रहा था, मैकबेथ ने जोर से कहा-"भाई, मैंने तुम्हारा कुछ नहीं किया है। मुझे देखकर सिर मत हिलाओ।" सब ने चकित होकर पूछा-"क्या बात है महाराजा?"

"मेरे पति को कई बार इस तरह हो जाता है, आप प्रश्न करके उनको तङ्ग न कीजिये। आप मेहरबानी करके इस समय चले जाइये। वे ठीक हो जायेंगे...." कहकर मेकबेथ की पत्नी ने सब को भेज दिया।

दो हत्याओं के बाद भी मेकबेथ को शान्ति न मिली। बाङ्को का लड़का तो बचकर भाग ही गया था। न मालूम उसके और शत्रु कौन हैं! इसलिए अपना भविष्य जानने के लिए मेकबेथ उस स्थान पर गया, जहाँ उसको बुढ़ियायें दिखाई दी थीं।

"मुझे कुछ सन्देह हो रहे हैं। तुम्हें उनका निवारण करना होगा।" मेकवेथ ने उनसे कहा।





बुढ़ियाओं ने मूतों को बुलाया। एक भूत ने प्रत्यक्ष होकर कहा-"फेफ के सामन्त मैकडफ से सावधान रहना।"

एक और भूत ने कहा-"तुझे किसी स्त्री द्वारा पैदा किये गये मनुष्य से कोई खतरा नहीं है। इसलिए तुम आराम से रहो। जो तुम करना चाहो वह तुम मनमानी करो।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि मेकड़फ मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। फिर भी उसे न छोडूँगा। उसको मरवा दूँगा।" मैकबेथ ने सोचा।

ये बातें सुनकर मेकबेथ को शान्ति हुई। उसने सोचा कि कोई उसे मार न सकेगा। कोई उसका कुछ न बिगाड़ सकेगा।

"पर यह बताओ; मेरे राज्य का परिपालन मेरे बाद क्या बाङ्को के वंशज करेंगे?" उसने भूतों से पूछा। इस प्रश्न के उत्तर में उसे आठ राजाओं के रूप बगल में से जाते दिखाई दिये। उनके बाद बाङ्को की आत्मा आई। मेकवेथ जान गया कि जो आगे गये थे वे बाङ्को के वंशज ही थे।

घर पहुँचते ही मेकबेथ को एक खबर दी गई कि फेफ का सामन्त मैकडफ भाग कर मालकम से जा मिला था, जो इंग्लैण्ड में रह रहा था। मेकड़फ मेकबेथ को हरा कर मालकम को स्काटलेण्ड का राजा बनाने की कोशिश कर रहा था।

मेकबेथ ने यह खबर सुनने के बाद गुस्से में मेकड़फ की पत्नी, लड़के और बन्धुओं को मरवा दिया। उसके हत्याकाण्ड दिन प्रति दिन बढ़ते जाते थे। कई सामन्त यह न सह सके। वे भागकर उस सेना में जा मिले जो मेकड़फ इकट्ठी कर रहा था। बाकी सामन्त होने को तो

मेकबेथ के साथ थे; पर उनको उसके प्रति कोई आदर भाव न था। अब उसकी पत्नी ही उसकी एक मात्र विश्वासपात्र रह गई थी। उसने अपने पति को भरसक ढाढ़स दिया। पर वह भी व्यथित, व्याकुल-सी थी। डम्फन की हत्या के लिए जो उसने किया था, वह भूल न पाई थी। आधी रात के समय वह सोती सोती उठती और चलने लगती। उसे लगता कि डम्फन का खून उसके हाथों में है। और बहुत धोने पर भी वह नहीं छूट रहा था। आखिर उसने आत्महत्या कर ली।

अब मेकबेथ से सहानुभूति करने वाला कोई न रह गया था। जब पता लगा कि उसका खातमा करने के लिए इंग्लैण्ड से सेना आ रही थी, उसमें मृत्यु का भी भय न रहा। क्योंकि उसने कई युद्ध किये थे। और युद्धों का अच्छा अनुभव था, इसलिए लड़ते लड़ते उसने प्राण छोड़ने चाहे। वह इन्सिनेन किले में जाकर मालकम, मेकड़फ की सेना के आने की प्रतीक्षा करने लगा। एक दिन एक नौकर ने आकर मेकबेथ से कहा- "महाराज! आश्चर्य है! क्या बताऊँ? वर्नाम जङ्गल हमारी तरफ



चला आ रहा है।" मैकबेथ को यह सुनकर आश्चर्य हुआ। यह असम्भव कैसे सम्भव हो सका, यह जानने के लिए वह बाहर आया।

हुआ यह था कि मेकबेथ को यह न पता लगे कि उसकी सेना कितनी बड़ी थी, इसके लिए माकन ने अपनी सैनिकों से कहा-"तुम किसी पेड़ को काटकर उनकी टहनियों को लेकर किले की ओर बढ़ो।" सैनिकों ने वैसा ही किया।

जब उसे मनुष्य न दिखाई दिया और जङ्गल आता दिखाई दिया, तो मेकबेथ को लगा कि भूतों का ज्योतिष ठीक निकल रहा था और उसके दिन पास आ गये थे।

थोड़ी देर बाद, मेकबेथ के थोड़े से आदमियों में, और मालकम की सेना में युद्ध हुआ। उस युद्ध में मेकड़फ मेकबेथ को खोजता खोजता आया और उसको देखकर, उसने उसे युद्ध के लिये ललकारा। मेकबेथ ने उससे युद्ध करने से इनकार कर दिया। "तुम मुझे न जीत सकोगे। मुझे वही मार सकता है, जिसे स्त्री ने जन्म न दिया हो। मैं तुम से युद्ध न करूँगा।" मेकबेथ ने कहा।

"मुझे किसी स्त्री ने जन्म नहीं दिया है। प्रसवकाल से पहले ही मुझे माँ के गर्भ से जबर्दस्ती निकाला गया था। इसलिए मैं ही तेरे लिए मृत्यु दूत हूँ।" मेकडफ ने कहा।

तब जाकर मेकबेथ की आँखें खुलीं। वह मेकड़फ़ से लड़ता लड़ता मारा गया।

कालक्रम से बाङ्को के वंश स्कोटलेण्ड की गद्दी पर बैठे। उनमें से अन्तिम जेम्स छटा, स्कोटलेण्ड के साथ इंग्लैण्ड का भी राजा बना। तब से दोनों देश एक ही राजा के नीचे हैं।





विक्रमसेन अमरावती नगर का राजा था। उसे अपने कर्मचारी पसन्द न थे; क्योंकि वे हमेशा उसकी यो खुशामद किया करते- आप इन्द्र हैं, चन्द्र हैं, आपके राज्य में प्रजा बहुत सुखी सन्तुष्ट है।"

इसलिए विक्रमसेन कभी कभी वेष बदलकर मामूली आदमी की तरह गाँवों में छुपा रहता और स्वयं पता लगाता कि लोग कैसे जी रहे थे।

एक दिन वेष बदलकर विक्रमसेन वन में से जा रहा था तो उसको, किसी का बांसुरी बजाना सुनायी दिया। राजा उस तरफ गया, और उसने एक गड़रिया देखा। उसकी उम्र कोई सोलह साल की होगी। चीथड़े पहने हुए था, फिर भी खूबसूरत लगता था। उसको देखकर राजा ने सोचा, शायद वह भी कोई राजकुमार था, जिसने वेष बदल रखा था। परन्तु उसने गड़रिये से बातचीत करके मालूम किया कि उसके माता पिता बहुत गरीब थे।

उस गड़रिये का नाम शम्भु था। उसने राजा के प्रश्नों का ठीक जवाब दिया। उसे घुमा फिरा कर, झूठी झूठी बढ़ी चढ़ी, बातें करने की आदत न थी।

"शम्भु, मेरे साथ आओगे? तुम्हें अच्छे कपड़े दूँगा .... अच्छा भोजन दूँगा...... और नौकरी भी दूँगा।" राजा ने कहा। शम्भु इसके लिए मान भी गया।

अमरावती नगर पहुँचकर जब उसने राज महल में कदम रखा तो उसको मालूम हो गया कि उस देश का राजा ही उसको स्वयं वहाँ लाया था। उसे बड़ी खुशी हुई।

रामकृष्ण



शम्भु के चीथड़े उतार दिये गये और उसको कीमती पोषाक, जेवर-जवाहरातों से जड़ी पगड़ी दी गई। उसे पढ़ना-लिखना सिखाया गया। उसे यह भी बताया गया कि दरबार में कैसे बात की जाती है, कैसे रहा जाता है, वगैरह। कुछ समय बाद राजा ने उसको अपना खजाञ्ची बनाया। राजा ने सोचा कि उस खजाने के लिए जिस में करोड़ों रुपयों की कीमती चीजें थीं उससे अधिक उपयुक्त और विश्वासपात्र अधिकारी नहीं मिल सकता था।

इस काम पर जाने से पहले शम्भु अपने गाँव गया। उन सब जगहों पर घुमा, जहाँ वह घूमा करता था। उसने बाँसुरी बजायी.... उसने अपने लोगों को उपहार भी दिये। उसके लोगों ने जब पूछा-"राजा की नौकरी कैसी है?" तो उसने कहा-"तुम इस राज्य को छोड़ कर कहीं न जाना। राजा के दरवार में तो नौकरी करना ही मत। वास्तविक सुख तो यहाँ है।"

फिर वह अमरावती वापस गया और राजा के खजाञ्ची का काम करने लगा। कुछ दिनों बाद राजा मर गया। राजा का लड़का कनक गद्दी पर बैठा। राजा के कई कर्मचारियों की शम्भु से नहीं पटती थी क्योंकि भूतपूर्व राजा, औरों की अपेक्षा, उसको अधिक आदर के साथ देखता था। अब उन कर्मचारियों ने नये राजा के कान भरने शुरू किये-"महाराज, इसने आपके पिताजी का विश्वास जैसे तैसे पा लिया और आपका खजाना लूट लिया। आप इस पर जरा नजर रखिये।"

राजा को अगर उसके कर्मचारी उसके कुशल-क्षेम का ख़याल करके कुछ कहें, तो

वह सुने बगैर कैसे रह सकता है? "यह दिखाइये कि शम्भु ने अपराध किया है, धोखा दिया है, हम उसको अवश्य दण्ड देंगे।" कनकसेन ने कहा।

"आपके बाबा के पास रत्नों से जड़ी तलबार थी, उसे लाकर दिखाने के लिए कहिये।" उन कर्मचारियों ने राजा को सलाह दी।

राजा ने शम्भु को बुलाकर कहा- "बाबा की तलवार तुम्हारे पास है, उसे लाकर एक बार मुझे दिखाओ।"

"महाराज! आपके पिता ने, उसमें से रत्न निकलवाकर और गहने बनावाये थे।" शम्भु ने कहा।

यह भी साबित हो गया कि शम्भु ने जो कुछ कहा था वह ठीक था। इसके लिए कई गवाह भी मिल गये। राजा ने उन कर्मचारियों से कहा-"शम्भु निरपराधी मालूम होता है।"

"महाराज ! खज़ाने में रखी सब चीज़ों की सूची बनाकर लाने के लिए कहिये। पुरानी सूची से उसे मिलाकर जाना जा सकता है कि कौन कौन-सी चीजें नहीं हैं।" कर्मचारियों ने कहा।



राजा की आशा के अनुसार, खज़ाने में जितनी चीज़े थीं, उन सब की सूची बनाकर शम्भु लाया। उस सूची को देखने से पता लगा कि कोई वस्तु न गई थी।

उसकी सूची में लिखी वस्तुओं का निरीक्षण करने के लिए राजा, स्वयं अपने परिवार के साथ आया।

खजाना को देखकर राजा बहुत आनन्दित हुआ। खजाने में सब चीज़े बड़े अच्छे ढङ्ग से, सजाकर रखी गई थीं। सूची के अनुसार उनको देख लेना बहुत आसान था।

राजा, जाने के पहले शम्भु की प्रशंसा करने ही वाला था कि उनके साथ आये हुये एक कर्मचारी ने खजाने के दीवार पर एक लोहे का किवाड़ दिखाया-"इस दीवार में शायद कोई सुरङ्ग है। न जाने उसमें क्या है!"

राजा ने शम्भु की ओर मुड़कर पूछा-"इस सुरङ्ग में क्या चीजें हैं? सूची में उनको क्यों नहीं लिखा?"

"महाराजा, क्षमा कीजिये, इस सुरङ्ग में जो है, वह मेरी अपनी सम्पत्ति है, जब वह मेरे लिये अमूल्य है। इसलिये मैने उसको आपकी सूची में नहीं दिखाया था।" शम्भु ने कहा।

यह कहते ही, राजा ने सोचा। जो कुछ अधिकारियों ने कहा था, वह सब साबित हो गया था, ठीक था। उसने गुस्से में कहा-"पहले इस सुरङ्ग का किवाड़ खोलो।"

शम्भु ने लोहे का किवाड़ खोला। दीवार की एक अलमारी में गड़रियोंवाला कम्बल, पुरानी चप्पल, एक बाँसुरी दिखाई दी।

राजा ने आश्चर्य से पूछा-"यही है तेरी बहुमूल्य सम्पत्ति?"

"हाँ, महाराजा, आपके पिताजी की नौकरी में आने से पहले मेरी यही सम्पत्ति थी। नौकरी में जबसे आया हूँ, तब से, सुख क्या चीज़ है, यह में नहीं जानता। मैं तभी तक सुखी रहा, तक वह सम्पत्ति मेरे पास थी।" शम्भु ने कहा।

राजा, शम्भु की बात सुनकर बड़ा प्रभावित हुआ। उसने शम्भु के प्रति पिता से भी अधिक आदर-सम्मान दिखाया और जिस जिसने उसके बारे में चुगली की थी, उनको नौकरी से निकाल दिया।

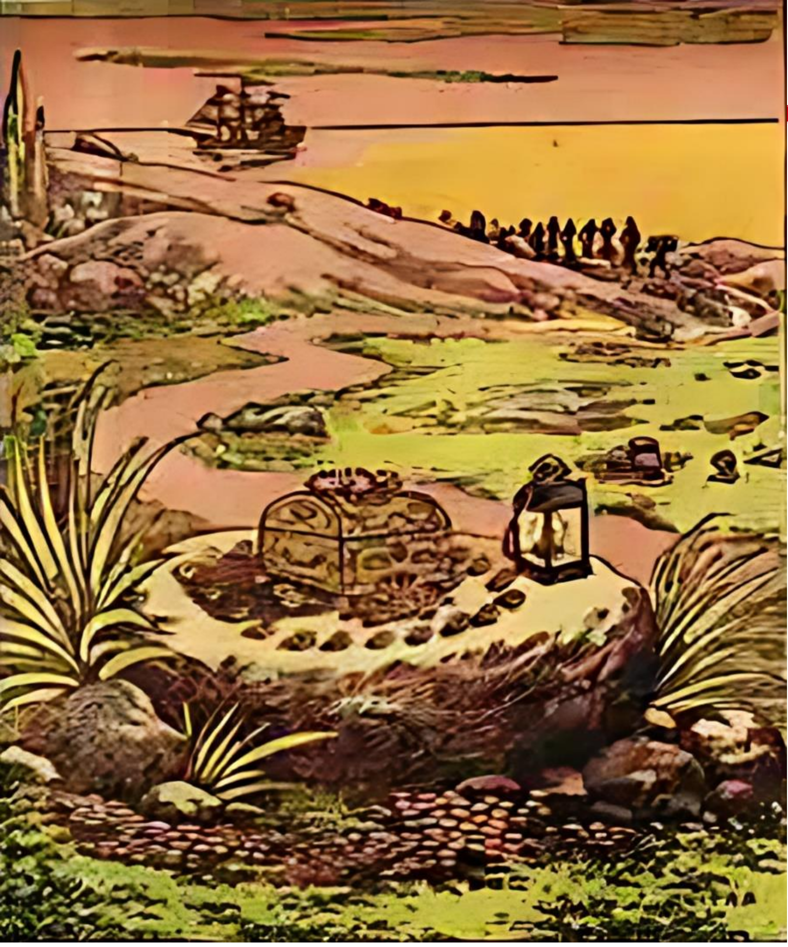




तपस्य और भल्लूक नाम के दो भाई, व्यापार करते, पाँच सौ गाड़ियों में समान लाद कर सफ़र करते किरिपाल वन की ओर आये। एक जगह गाड़ियों के पहिये भूमि में फँस गये। बैलों को सम्भालना पड़ा।

उन दोनों भाईयों ने यह सोचकर कि यह भगवान की कोई माया है, धूपबत्तियों से देवताओं की आराधना की। उस समय उनको वन में बुद्ध दिखाई दिये। उन्होंने उनको खाने के लिए मधु दिया। बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद, उन्चास रोज उपवास करने के बाद, उनका यह पहला पहल आहार था।

बुद्ध ने इन भाइयों को तीन निश्चयों का ज्ञान करवाया और उनको उपासक के रूप में स्वीकार किया। इस बीच उनकी गाड़ियाँ भूमि में से ऊपर उठ आईं। उन्होंने आगे जाते हुये कहा- "आपका स्मरण बना रहे, इसलिये हमें कोई चीज़ दीजिये।" बुद्ध ने अपने दायें हाथ से अपने सिर के केश दिये। वे उन्हें एक पिटारी में रख कर अपने साथ ले गये।



वे भाई धीमे धीमे समुद्र के किनारे पहुँचे और अपना माल नाव में चढ़ाकर, समुद्र यात्रा करने लगे। कुछ दिनों बाद ये सिंहल द्वीप पहुँचे। क्यों कि उनको ईन्धन और जल की जरूरत थी, इसलिये वे नाव को एक बन्दरगाह में ले गये। वे किनारे पर जाकर खाना पकाने लगे। उन्होंने उस पिटारी को, जिसमें बुद्ध के केश थे, एक पत्थर पर रखा।

भोजन समाप्त करके जब उन्होंने वापस नाव में जाना चाहा, तो उन्होंने पिटारी लेनी चाही। पर वह पत्थर से चिपक गई थी। इसलिये आई न। उन्होंने पिटारी के चारों ओर दीप जलाये। फूल रखे। फिर वे अपनी यात्रा पर चले गये। कुछ समय बाद, उस स्थल पर गिरिहन्य विहार बनाया गया।

बुद्ध ने अपने धर्म के बारे में, जिसका उन्हें प्रचार करना था, बहुत कुछ सोचा। मनुष्य पाप के पङ्क में थे। वे लेषमात्र भी सत्य न जानते थे। वे मेरी बातें सुनकर, सत्य जानकर, ठीक कैसे हो सकेंगे? इस विषय पर बुद्ध सोच रहे थे।

बुद्धत्व पाने के साठ दिन बाद, वे पैदल, असिपतन नामक जगह के लिये निकले। यह २४४ मील दूर है और वाराणसी के समीप है। रास्ते में उपक नाम का एक याचक मिला। बुद्ध का रूप व तेज देख वह चकित रह गया। उसने पूछा- "स्वामी, क्या आप ब्रह्मा है, या इन्द्र?"

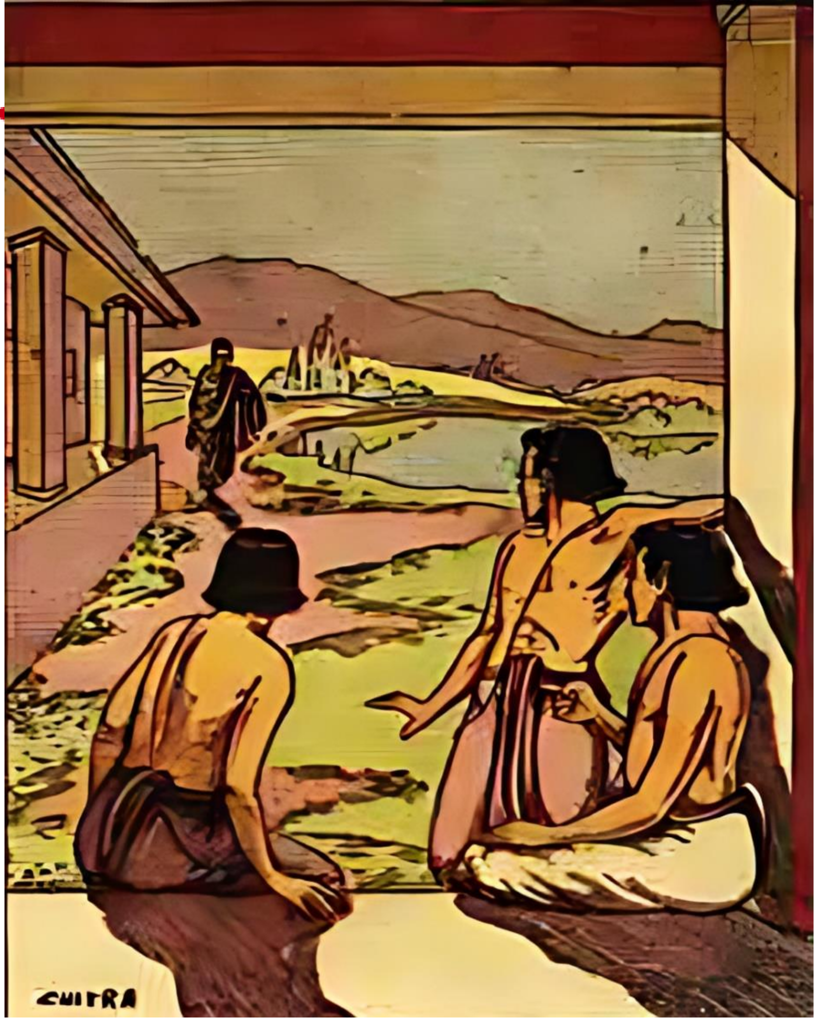
"मैं न ब्रह्मा हूँ, न इन्द्र ही। जन्म परम्परा क्यों चलती रहती है, उससे कैसे मुक्ति पाई जा सकती है यह जानकर, जो कुछ छोड़ना था, मैंने छोड़ दिया है, जो कुछ जमा करना था जमा कर लिया है। मैं बुद्ध हूँ। मेरा नाम अनन्तजिनम है।" बुद्ध ने कहा।

थोड़ी दूर तक उपक, बुद्ध के साथ चलकर बङ्गदेश चला गया। वहाँ उसने एक स्त्री से विवाद किया। गृहस्थी में कुछ समय तक तरह तरह के कष्ट झेलता रहा। फिर वह बुद्ध को खोजता असिपतन आया। और वहाँ बौद्ध होकर, उसने निर्वाण पाया।

जिस दिन वे उपक से मिले थे, उसी दिन बुद्ध असिपतन बिहार पहुँचे। करवेल वन में जो कुछ समय तक उनके शिष्य थे, फिर उनमें विश्वास छोड़कर चले गये थे, कोदिन्य, आदि पाँच तपस्वी, उसी बिहार में रहा करते थे।

बुद्ध कुछ दूरी पर थे कि उन्हें पहचान कर उन्होंने सोचा-"देखो, वह भी यहीं आ रहा है। शरीर तो देखो, सोने की तरह चमक रहा है। लगता है, खूब खा-पी रहा है। मालूम होता है, बुद्धत्व के लिए भी प्रयत्न छोड़ दिया है। अगर वह आये तो हम उसे अपने साथ बैठने देंगे, पर हमारे उठने की कोई जरूरत नहीं है।"

परन्तु जब बुद्ध उनके पास आये, तो वे अपना निश्चय भूल गये। उन्होंने उठकर उनका स्वागत किया। कुशल प्रश्न पूछे।



उसी दिन शाम को बुद्ध ने उस बिहार में अपना पहला उपदेश दिया। उन्होंने कहा कि जो आचार्य बनना चाहते हैं उनको अपनी पापपूर्ण इच्छायें छोड़नी होगी। ब्राह्मण तपस्वियों के व्रत-उपवास भी छोड़ने होगें। वे मगध भाषा में इस प्रकार बोले ताकि सब समझ सकें। इस उपदेश के कारण, उन पाँचों में सबसे बड़ा कौण्डिन्य बुद्ध का शिष्य हो गया।

बुद्ध जब असिपतन में थे, उनके पास अनेक लोग आये और उनके शिष्य हो गये। इन शिष्यों में, एक सुजाता का



लड़का, यश भी था। यश, एक दिन रात को छुपा छुपा, बुद्ध के पास आया, बुद्ध ने बड़े प्रेम से उसको बुलाया और उसको अपना शिष्य बना लिया।

सुजाता का पति यह जानकर बड़ा दुःखी हुआ कि उसका लड़का यों बौद्ध हो गया था। बुद्ध ने उसको भी उपदेश दिया, और उसको भी अपने शिष्यों में स्वीकार किया। यश के साथ खेलनेवाले चौरासी बच्चे, उसका मन बहलाने के लिए वहाँ आये। बुद्ध ने उनसे भी बातचीत की और उनको भी अपना शिष्य बना लिया।

तब बुद्ध के शिष्यों में साठ ऐसे थे, जो अर्हत श्रेणी के थे। उनसे बुद्ध ने कहा-"अब आप भिन्न भिन्न दिशाओं में जाकर लोगों को यह बनाइये कि बुद्ध का अवतार हुआ है।" अर्हतो के जाने के बाद, बुद्ध ऊरवेल वन की ओर निकले। मध्य मार्ग में, एक चौराहे पर एक पेड़ के नीचे उन्होंने विश्राम किया। उस समय वहाँ बत्तीस क्षत्रिय युवक आये। वे भद्र वर्ग के उत्तम क्षत्रिय थे। कोशल देश के थे। कोशल ने इनके परिपालन के लिए एक परगना दे रखा था। एक दिन वे अपनी स्त्रियों को लेकर कप्सशिक नामक सुन्दर प्रदेश को देखने आये। उन बत्तीसों में एक के साथ उसकी पत्नी न थी। रखेल थी। वह उसके आभूषण चुराकर भाग गई। उसको खोजते खोजते, वे बुद्ध के विश्राम स्थल के पास आये। बुद्ध ने उनकी कथा सुनकर कहा-"क्या तुम्हारे लिए दूसरों को खोजना अच्छा है, या अपने को?"

क्षत्रिय उनका उद्देश्य समझ गये, वे मान गये कि सब के लिए अपने आप को खोजना ही अच्छा था।





बुद्ध उनका उत्तर सुनकर प्रसन्न हुए। उनको उन्होंने उपदेश दिया। उनको भी अर्हत बनाकर देश विदेश भेजा। इस बार अर्हतों की संख्या ९२ हो गई। बुद्ध जब ऊरवेल बन वापस आये, तो उनको एक बात मालूम हुई। समीप ही, एक नदी के किनारे, ऊरवेल काश्यप, गया काश्यप, नदी काश्यप नाम के तीन भाई, विनोद-विलास में समय बिताते, अपने को अर्हत बताकर लोगों को ठग रहे थे। बड़े भाई के, ५०० शिष्य, मञ्झले के ३०० शिष्य, और सबसे छोटे के २०० शिष्य थे। इन हजार आदमियों को उपदेश देकर, बुद्ध ने उनको सन्मार्ग पर लाना चाहा।

एक दिन वे शाम को करवेल काश्यप के घर गये। उस दिन रात को, उन्होंने, उनसे उनके अग्नि गृह में रहने की अनुमति माँगी।

"मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु अग्नि गृह में एक विष सर्प है। हम अर्हत हैं, इसीलिए हम भाइयों का वह कुछ नहीं करता। परन्तु तुम जैसे, जो अर्हत नहीं है, उसके विष के कारण जल जायेंगे।" करवेल ने कहा।

बुद्ध ने उन बातों को अनसुना करके कहा-"मुझे कृपा करके उस अग्निगृह में रहने दीजिये।"

"मैंने कह दिया है कि वहाँ विष सर्प है, चाहो, तो सो रहो।" करवेल ने कहा।

उस दिन रात को जहाँ बुद्ध सोये हुए थे, वहाँ विष सर्प आ ही पहुँचा। बुद्ध मे उसको अपने वश में करके, उसका विष निकालकर अपने भिक्षा पात्र में रख लिया।

अगले दिन काश्यप बन्धुओं ने देखा कि बिष सर्प बुद्ध के भिक्षा पात्र के चारों ओर लिपटा पड़ा है। वे चकित हुए। उन्होंने बुद्ध से कहा-"तुम विष सर्प को वश करने मात्र से, अर्हत नहीं हो जाओगे।"

फिर बुद्ध ने तीनों काश्यपों को, और उनके हज़ार शिष्यों को उपदेश दिया। बे सब उनके शिष्य हो गये, और अर्हत श्रेणी में शामिल कर लिए गये।

सिद्धार्थ ने विम्बसार को वचन दे रखा था कि बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद, राजगृह आकर, वे वहाँ की प्रजा को उपदेश देंगे। इसलिये बुद्ध राजगृह के लिए निकले और राजगृह से, बारह मील दूर, इष्ट वन में, एक पेड़ के नीचे बैठ गये। बुद्ध के साथ करवेल काश्यप भी था।

बिम्बसार को गुप्तचरों द्वारा मालूम हो गया कि बुद्ध इष्ट वन में विश्राम कर रहे थे। वह एक लाख बीस हज़ार आदमियों को लेकर बुद्ध के पास पहुँचा।

विम्बसार के लोग जानते थे कि उरवेल काश्यप बहुत बड़ा सिद्ध



था। उसको अब बुद्ध के साथ देखकर वे निश्चय न कर पाये कि उनमें कौन गुरु था, और कौन शिष्य। उनके सन्देह का निवारण करते हुए ऊरवेल ने कहा- "सज्जनो। बुद्ध सूर्य हैं। मैं उनके समक्ष पतङ्गा-सा हूँ।"

उस समय, सर्व प्रथम बुद्ध ने, वहाँ उपस्थित लोगों को जातक कथा सुनाई । उसका सारांश यों था:-

ऊरबेल पूर्व जन्म में अङ्गाति नाम का मिथिला देश के एक नगर का राजा था। उसकी एक लड़की थी जिसका नाम रुपा था।

अङ्गाति के मन में क्षुद्र विचार उठे। वह सोचता कि मृत्यु के बाद प्राणी का और कोई जन्म नहीं है। प्राणी मरने पर पञ्चभूतों में लीन हो जाता है, इसलिए जो कुछ आनन्द लेना है, इसी जन्म में ले लेना है। उसकी पुत्री, रुपा जब अच्छे काम के लिए धन माँगती, तो वह देने से इनकार कर देता। तब बोधिसत्व ने, जो उस समय ब्रह्मा के रुप में था, उसके पास आकर कहा-"क्यों नहीं अपनी लड़की को अच्छे कार्यों के लिए पैसे देते हो?"

"मेरी लड़की को जो कुछ धन चाहिये, अब आप दीजिये। मैं मरने के बाद, इस कर्ज का दस गुना कर्ज चुका दूँगा। मैं इतने राज्य का राजा हूँ। आपका पैसा कहीं न जायेगा।" अङ्गाति ने कहा।

तब बोधिसत्व ने कहा-"अरे पगले। तू अब तो राजा है। पर मरने के बाद तेरे पास एक लङ्गोटी भी न रहेगी। खाने के लिये भी कुछ न रहेगा। तुम नरक में हर तरह के कष्ट भुगतोगे। उस हालत में तुम मेरा कर्ज कैसे चुका सकोगे? इसलिए मैं तुम्हें कर्ज न दूँगा।"

यह सुन, अङ्गाति डर गया। उसने अपने विचार बदल लिये.... और पुण्य कमाये।

यह जातक कथा सुनाने के बाद, जो उपदेश सुनने आये थे उनको, और बिम्बसार को अपना शिष्य बना लिया। बिम्बसार का जब राज्याभिषेक हुआ था, तब उसकी उम्र सोलह वर्ष की थी, अब उसकी उम्र उनत्तीस साल थी। उसके बाद, छत्तीस साल, उसने बद्ध की सहायता में बिताये।





उज्जयनी नगर में पाकयाजी नाम का एक महापण्डित रहा करता था। उसने सब विद्यायें व शास्त्र सीख रखे थे, पर जादु नही सीखा था। पाकयाजी ने सोचा कि यदि उसने वह विद्या भी सीख ली, तो उसका पाण्डित्य पूरा हो जायेगा।

उज्जयनी नगर में लघुकर्णी नाम का एक प्रसिद्ध जादूगर रहा करता था। एक दिन पाकयाजी ने लघुकर्णी के पास जाकर कहा-"मैंने अनेक गुरुओं के पास सकल शास्त्र व विद्यायें सीखी हैं। मुझे ऐसा कोई गुरु न मिला जो मुझे जादू सिखा सके। यह कमी आप ही पूरी कीजिये। मुझे अपना शिष्य बनाइये और कृपा करके मुझे जादु की विद्या सिखाइये।"

यह सुनकर लघुकर्णी ने कहा-"हाँ...हाँ.... आप तो महापण्डित हैं। और मेरे शिष्य कैसे होंगे?"

"यह न कहिये। जो विद्या देता है, वही गुरु है। मैं क्योंकि राजा के यहाँ काम कर रहा हूँ, इसलिए आपको यथोचित गुरुदक्षिणा भी दे सकूँगा।" पाकयाजी ने कहा।

"अच्छा, तो मैं आपको जादू सिखाना शुरु कर दूँगा। मुझे और कोई गुरुदक्षिणा नहीं चाहिये। मेरा एक ही लड़का है। और उसको मेरे जादू में दिलचस्पी नहीं है। वह राजा के यहाँ नौकरी करना चाहता है। आप ज़रा उसकी मदद कीजिये।" लघुकर्णी ने कहा।

"इसमें कौन-सी बड़ी बात है? अगर मैं कहूँ तो राजा मान जायेंगे।" पाकयाजी ने कहा। फिर लघुकर्णी ने कुछ मन्त्र पढ़कर पाकयाजी को जादू सिखाना शुरु किया।

थोड़ा समय बीता। राजा ने पाकयाजी को अपना सलाहकार नियुक्त किया। उसी दिन लघुकर्णी ने पाकयाजी से कहा-"मेरे लड़के के बारे में क्या किया? क्या आप उसे वह नौकरी नहीं दिला सकते हैं, जो आप अब तक करते आये थे?"

"क्यों नहीं दिला सकता? राजा ने उस नौकरी के लायक आदमी सुझाने के लिए मुझसे कहा है। परन्तु मेरे मामा जिद कर रहे हैं कि यदि मैंने वह नौकरी उनके लड़के को न दिलवाई तो वह निरशन व्रत करेंगे। इसलिए इसबार उनकी इच्छा के अनुसार करना पड़ा।" पाकयाजी ने कहा।

"मामा के लड़के को नौकरी देना ही ठीक है। जाने दीजिये। मेरे लड़के को कुछ और नौकरी दिलवाइये।" जादूगर में कहा।

थोड़ा समय और बीत गया। राजा का प्रधान मन्त्री मर गया। राजा ने पाकयाजी को बुलाकर कहा-"मेरे और भी बहुत से मन्त्री हैं, परन्तु मैं आपको ही प्रधान मन्त्री बनाना चाहता हूँ।"



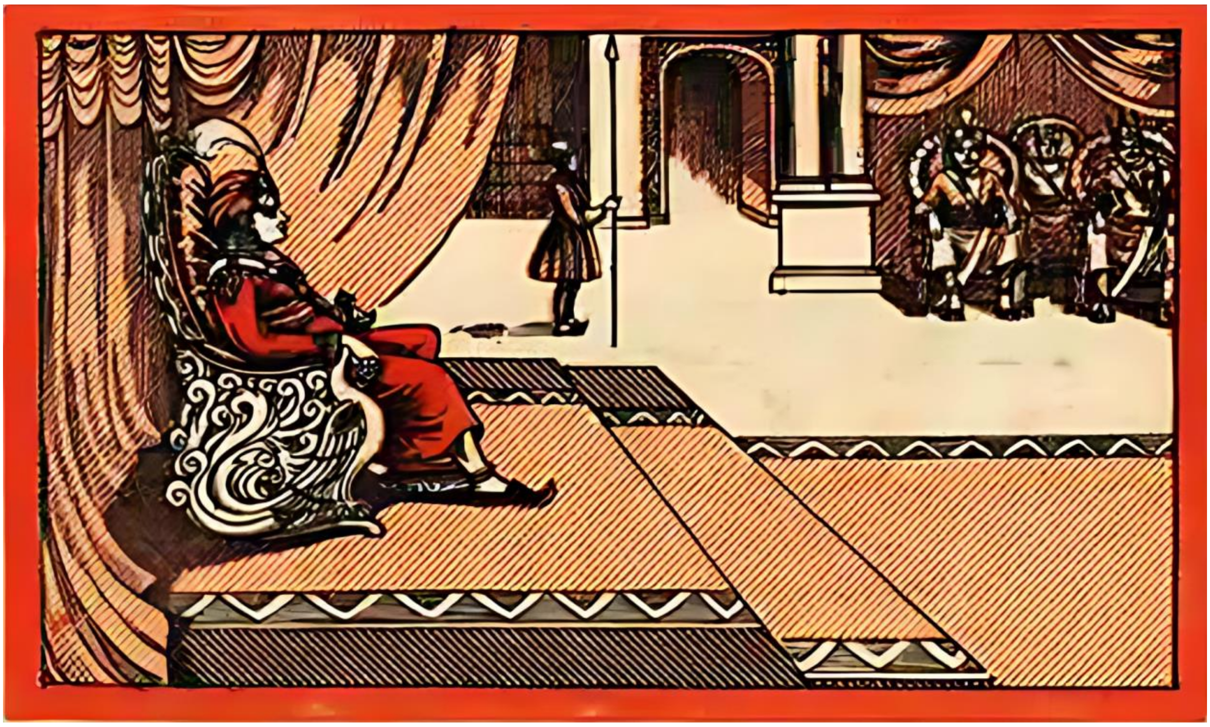
पाकयाजी सन्तुष्ट हुआ। उसने यह भी सोचा कि क्योंकि वह जादू सीख रहा था इसलिए ही उसको यह उच्च पद मिला था।

उस दिन लघुकर्णी ने पाकयाजी से पूछा-"मेरे लड़के के बारे में! अगर आपने उसको नौकरी दी तो कोई कुछ न कहेगा।"

"हाँ, हाँ, और नौकरी ही क्यों? मैंने उसको राजा का सलाहकार बनाना चाहा। परन्तु मेरे मौसी के पति ने जिद पकड़ी कि यदि मैने उसे यह नौकरी न दी तो वह सन्यास ले लेगा। इसलिए उसे वह नौकरी देनी पड़ी।" पाकयाजी ने कहा।

"ठीक ही है कि आप अपनी मौसी के पति का पहले ख्याल करें। परन्तु जब कोई अच्छा मौका मिले तो मेरे लड़के को न भूलिए।" लघुकर्णी ने कहा।

कुछ और समय बीता.... इस बार राजा मर गया। उसके लड़के न थे। यह समस्या पैदा हुई कि किसका राज्याभिषेक किया जाय। दरबारियों ने एकमत से पाकयाजी को राजा चुना। राजपुरोहित ने सुमुहूर्त निश्चित करके पाकयाजी का राज्याभिषेक किया।



पाकयाजी के ऊपर छत्र उठाया गया। उस पर चामर चलाये गये।

इतने में एक नौकर ने आकर कहा- "महाराज, कोई जादुगर आपके दर्शन के लिए आया हुआ है। हुक्म हो तो अन्दर प्रविष्ट करें।"

पाकबाजी को यह देख गुस्सा आया। स्वर्ग गये फिर भी कष्ट न छूटे। राजा हो गया पर इस जादूगर से छुटकारा न मिला। नौकर से उसने जादूगर को प्रविष्ट कराने के लिए कहा।

लघुकर्णी ने आकर पूछा-"महाराज, मेरे लड़के की नौकरी के बारे में क्या कहते हैं?"

"मुझे पता लगा है कि तुम जादू करके, लोगों को तरह तरह से ठग रहे हो। तुम्हे बिना रोक टोक के फिरने देना मेरे लिए खतरनाक है।" कहकर पाकयाजी ने अपने सैनिकों से कहा-"इस नीच को बाँधकर, जेल में डाल दो। इसकी सुनवाई बाद में होगी।"

यह सुन लघुकर्णी कोई मन्त्र पढ़ने लगा। पाकयाजी मूर्छित-सा हो गया। जब उसने आँखें खोलकर देखा, तो पता लगा कि वह जादूगर के घर ही था। सिंहासन, दरबार, छत्र-चामर, नौकर-चाकर कोई न था। कुछ भी न था।

"माफ कीजिये! जादू की विद्या को भी, हर किसी को नहीं देना चाहिए। योग्य व्यक्तियों को ही देना चाहिए। मैं आपको यह विद्या नहीं दे सकता।" लघुकर्णी ने कहा।

"जादू की विद्या तो न सीख सका, पर पाकयाजी को पता लगा गया कि जादू क्या चीज़ है।" उसने यह सोच निश्वास छोड़ा। लघुकर्णी से विदा लेकर वह घर चला गया।



CHANDAMAMA (Hindi) JUNE 1959 Regd. No. M. 5452



बुद्ध चरित्र